हिन्दी

में

निबंध-साहित्य

लेखक

जनार्दनस्वरूप अग्रवाल

एम्० ए०, बी० ए० (ऑनर्स)

साहित्यरत्न

प्रकाशक

साहित्य-भवन लिमिटेड, प्रयाग

प्रकाशक—साहित्य-भवन लिमिटेड, प्रयाग

प्रथम बार : मूल्य १।)

सं० २००२

मुद्रक—गिरिजाप्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग

श्रीयुत डा० रामकुमार वर्मा
के कर-कमलो में
सादर समर्पित

जनार्दनस्वरुप अग्रवाल

मेरे दो शब्द

गतवर्ष प्रयाग विश्वविद्यालय के अतर्गत छात्र जीवन मे मैंने 'हिन्दी मे निबंध-साहित्य' पर एक प्रबध लिखा था। उसकी सामग्री मुझे कतिपय स्थानों से इतनी उपलब्ध हो गई कि उसे एक पुस्तक का रूप दे देने की मेरी इच्छा हुई।

हिन्दी-साहित्य मे उपन्यास, नाटक, कहानी का भाण्डार तो नित्य प्रति अच्छी-बुरी रचनाओं से भरता ही रहा है—उनकी माँग भी अधिकाधिक हो रही है, परन्तु उनके साथ ही उच्च कोटि के साहित्य मे निबध को भी स्थान प्राप्त है। उसकी सामग्री भी प्रचुरमात्रा मे प्राप्त है, अतः एक मातृ भाषा-सेवी की दृष्टि से उक्त प्रकार का प्रयास किया गया है।

साधारण लेख एवं निबंध में अंतर स्पष्ट है। पाठक, इस पुस्तक में उक्त अन्तर को ध्यान मे रखकर ही आगे बढ़े। निबध के प्रमुख गुण हैं—आत्मीयता और व्यक्तित्व। ये दोनों गुण निबध की आरभिक कल्पना से चले आ रहे हैं। प्रारभ के निबध लेखकों मे ये गुण प्रभूत मात्रा मे प्राप्त होते हैं और किसी किसी में अब भी—यथा सियारामशरण गुप्त, शातिप्रिय द्विवेदी आदि। परन्तु अन्यथा अब परिस्थिति में ही नहीं, निबंध की वह प्रारभिक कल्पना में भी परिवर्तन हो गया है। अब अधिकाश विद्वान् समालोचनात्मक एव साहित्य संबंधी लेखों के लिखने में अपनी लेखनी की क्षमता की इतिश्री कर देते हैं। यह भिन्नता भी ध्यान देने योग्य है।

इसमे पाठकों को सामग्री का एकत्रीकरण ही अधिक मिलेगा, अतः वे इसे क्लर्क-कार्य समझकर दोषारोपण न करें। मैं सारी सामग्री को एक स्थान पर न पा सकने के कारण उसका यथोचित उपयोग भी

क्रम कर सका हूँ । अतः लेखकों की व्यक्तिगत विशेषताओं और शैलियों के विस्तृत एव सूक्ष्म अन्वीक्षण की आशा से पाठक इस पुस्तक का अवगाहन न करें, प्रत्युत यदि इस सामग्री से किसी को तत्सबंधी विशेष-कार्य करने की प्रेरणा मिली तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

प्रमुख लेखकों के वर्णन के अनतर कुछ पक्तियाँ उनकी भाषा और शैली पर भी लिखी गई हैं, परन्तु वे नितात अपर्याप्त हैं और कभी कभी दूसरे विद्वानों के शब्द भी हैं। जहाँ लेखकों की निबध शैली एक से अधिक प्रकार की मिलती है, वहाँ उनकी प्रमुख तथा अधिक प्राप्त शैली का ही वर्णन है।

पाठक निबधों के अंशों या उदाहरणों को पढते समय प्रायः उपेक्षा की दृष्टि से देखा करते हैं। तदर्थ केवल यह निवेदन है कि उनको ध्यान पूर्वक पढ़ने से ही वस्तु स्थिति का सम्यक् ज्ञान होगा, साथ ही वे बहुधा मनोरजक भी हैं, क्योंकि उनके चयन मे विशेष चिंता की गई है, वे कलेवर वृद्धि के निमित्त नहीं रखे गए हैं।

मैं मौलिकता का दभ नहीं करता, जो कुछ अच्छा-बुरा है, उसका उचित एव उपयुक्त निर्णय पाठक ही कर सकेंगे। हाँ यदि कोई कृपालु विद्वान् अपनी सम्मति तथा परामर्श से मेरा उत्साह बढायेंगे, तो मैं अपने को धन्य समझूँगा।

तारा-पुस्तक-भवन
शाहजहाँपुर
रामनवमीः सं० १९९९ वि०

जनार्दनस्वरूप अग्रवाल

विषयानुक्रमणिका

विषय–प्रवेश

किसी समालोचक का कथन है कि निबन्ध गद्य की कसौटी है। जिस भाषा के निबन्ध जितनेही उच्च कोटि के होंगे उसके गद्य को उतनाही विकसित तथा उन्नत समझना चाहिये। भाषा, भाव, विचार तथा लेखन शैली पर निबंध के लेखक का पूर्ण आधिपत्य होना चाहिये, साथही साथ अपने विषय का विशेषज्ञ होना भी उसके लिये अनिवार्य है। इसीलिए उपन्यास, कहानी, नाटकादि सभी से कठिन होता है निबध लिखना।

यदि हिन्दी के प्रारम्भिक साहित्य पर दृष्टि डाली जाय तो साधारण गद्य हमे १३ वी शताब्दी मे ही राजस्थान के चारणो द्वारा लिखित 'ख्यातों' मे मिलता है। किन्तु ये राजाओ की वशावलियाँ मात्र थीं, अतः इनमे साहित्यिकता का तो नितान्त अभाव ही था। यही दशा तत्कालीन जैन धर्म ग्रन्थो की भी थी, उनमे भी जो थोड़ा बहुत गद्य मिलता है, वह साम्प्रदायिक सिद्धान्तों के खण्डन मण्डन से ही परिपूर्ण है, अतः वह हमारे काम का नही। इसी प्रकार हिन्दी साहित्य के मध्य-काल मे जो ब्रजभाषा में कुछ गद्य की पुस्तके, कथा कहानियाँ या अन्य धार्मिक टीका-टिप्पणियाँ लिखीं गई, वे साहित्यिक कोटि के गद्य मे ही जब स्थान पाने की अधिकारिणी नही, तो निबध की परिधि से तो वे बहुत ही दूर हैं। निष्कर्षतः विक्रम की उन्नीसवी शताब्दी के अन्ततक जब सुरुचिपूर्ण अच्छा गद्य ही नहीं प्राप्त था तो निबध के समान प्रौढ़ गद्य-रचना की आशा ही करना व्यर्थ है।

निबध शब्द की कल्पना वास्तव मे हमारे साहित्य में अँग्रेजी राज्य स्थापित हो जाने के अनंतर से आई है। अँग्रेजी मे निबध साहित्य का

बड़ा सुन्दर भण्डार है और उसकी वृद्धि करने वाले हैं बेकन, स्टील, एडीसन, गोल्डस्मिथ, हैजलिट, कार्लाइल, रस्किन, ले हण्ट, चार्ल्स लैम्ब, वाल्टर रैले, स्टीवेन्सन, लूकस, गार्डनर आदि, जो लगभग ३५० वर्ष से अपनी अप्रतिम रचनाओं द्वारा उसे सम्पन्न करते चले आ रहे हैं। इन प्रतिनिधि तथा प्रमुख लेखकों का हिन्दी के निबध साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा है अतः पश्चिम मे निबध का विकास किस प्रकार हुआ, अँग्रेजी मे उसकी क्या परिभाषा है, उसकी कितनी परिधि है, तथा क्या विशेषताएँ हैं,—यह सक्षेप में यहा देख लेने से हमे हिन्दी लेखकों की उत्कृष्टता तथा मौलिकता का मूल्याकन करने मे ही सुविधा नही होगी, प्रत्युत उनकी रचनाओं मे पश्चिमीय दृष्टिकोण मे निबधत्व कितना है, यह भी सरलता से समझा जा सकेगा।

पश्चिम में निबंध का विकास और उसकी परिभाषा

मिकेल मौन्टेन नामक एक फ्रांसीसी विद्वान् ने, जो निबंध का जन्मदाता माना जाता है, एक बार अपने विषय में कुछ लिखने की सोची उसने इस कार्य के लिये एक सुदूर निर्जन स्थान ढूँढा—इससे मौण्टेन का अभिप्राय कदाचित यह था कि ऐसे स्थान में उसकी रचना में दूसरों के अनुभव, विचार या पुस्तकों का प्रभाव न पड़ सकेगा और वह बिलकुल अपने ही ढंग से अपने विषय में लिख सकेगा। इस प्रकार उसने कुछ लेख लिखे और उन्हें १५८० ई० में एसेइस (Essais) नाम से प्रकाशित किया। उपर्युक्त तिथि से पूर्व इस शब्द का प्रयोग प्रयत्न, परीक्षा या परीक्षण के अर्थ में होता था। परन्तु मौन्टेन ने अपने लेख संग्रह का एसेइस नाम रख कर पहली बार इस शब्द का प्रयोग साहित्यिक अर्थ में किया। मौण्टेन के लेखों को यद्यपि तीन शताब्दियाँ हो चुकी हैं किन्तु आज भी वे बड़े आदर के साथ पढ़े जाते हैं। उनका इतना प्रभाव पड़ा कि उनसे साहित्य के एक नवीन अंग का ही प्रादुर्भाव हो गया। यहाँ यह बताना भी अप्रासंगिक न होगा कि मौण्टेन ने उपर्युक्त पुस्तक की भूमिका में स्पष्ट लिख दिया है कि निबंध में आत्मचरित का चित्रण होना अनिवार्य है। जिस निबंध में इस तत्व का अभाव हो, वह निबंध कहाने योग्य नहीं। इसका यह तात्पर्य नहीं कि लेखक अपनी जीवनी लिखे किन्तु निबंध के विषय में यदि निबंधकार आत्मीय अनुभव का पुट देता चले तो उसकी कृति में सजीवता और मनोरंजकता अधिक आ जायगी। इसीलिए एडीसन ने लिखा है

"The most eminent egoist that ever appeared in the world was Montaine-"

अर्थात् मौन्टेन ही संसार मे सर्वश्रेष्ठ आत्मवक्ता हुआ है।

निबध की इस सक्षिप्त जन्म-कथा के अनन्तर उसकी परिभाषा बड़ी महत्वपूर्ण है। डा० सैमुअल जान्सन अँग्रेजी के एक असाधारण विद्वान तथा उच्चकोटि के निबधकार हुए हैं। उन्होने निबध की परिभाषा इस प्रकार दी है :—

"An essay is the sally of the mind, an irregular undigested piece, not a regular and orderly composition-"

"निबध मानसिक जगत का एक ढीलाढाला बुद्धि विलास है, इसी लिये वह कोई क्रमिक और नियमित रचना न होकर एक अव्यवस्थित और अपरिपक्व विचार खण्ड होता है।" किन्तु आजकल जो निवध लिखे जाते हैं वे इस पुरानी परिभाषा के अनुकूल कम ही होते हैं। इसीलिये आक्सफोर्ड अँग्रेजी कोष मे एक दूसरी नवीन ही परिभाषा रखी गई है। यथाः—

"An essay is a composition of moderate length on any particular subject or branch of a subject, originally implying want of finish, but now said of a composition more or less elaborate in style though limited in range-"

"निबध किसी विषयविशेष या किसी विषय के अश पर एक साधारण कलेवरमयी रचना है, जिसमें प्रारंभ मे अपरिपूर्णता की कल्पना रहती था, किन्तु अब उसका प्रयोग एक ऐसी रचना के लिये किया जाता है जिसकी परिधि के सीमित रहने पर भी शैली प्रायः प्रौढ एव परिमार्जित रहती है।"

इस प्रकार निबंध की परिभाषा मे ही इन दो तीन सौ वर्षों मे महान् अंतर हो गया है। आजकल के लेखक पुराने लेखकों से जिस बात मे महत्वपूर्ण भिन्नता रखते हैं वह यही है कि ये निबध के तर्कपूर्ण क्रमिक विकास तथा शैली की गभीरता एव प्रौढता पर अधिक

ध्यान देते हैं, और प्राचीन तथा प्रारभिक लेखक शिथिलता, आत्मीयता एवं घनिष्ठता पर अधिक जोर देते थे। यहाँ पर इस 'शिथिलता' शब्द से यह भ्रम न हो जाय कि साधारण लेखकों की अपरिपुष्ट रचना कासा शैथिल्य निबध का विशेषता है, अतः बा० श्याम सुदर दास जी के कुछ शब्द यहाँ अविकल लिखे जाते हैं, उनसे उपर्युक्त कथन स्पष्ट हो जायगा।

'वास्तव मे निबध की शिथिल शैली अत्यधिक प्रभावशालिनी होनी चाहिए। बौद्धिक विचारों की शुष्कता और दुरूहता को दूर करने के लिए निबध-लेखकों का यह प्रधान साधन है जिससे वे पाठकों के हृदय को अपनी ओर लगा सके। उन्हें शैथिल्यपूर्ण हल्का वातावरण बनाना कला की दृष्टि से आवश्यक होता है।"

निबध की सीमा या परिधि की विवेचना मे भी इस शिथिलता पर पर्याप्त प्रकाश पड़ जायगा। मौन्टेन के अनुसार निबध का एक निश्चित विषय तो अवश्य होता है "किन्तु उसके 'एसे' उस विषय की परिधि से ही घिरे नही रहते थे। प्रस्तुत विषय के साथ अग्रसर होते हुए उक्त विषय के ससर्ग से जो प्रासगिक विषय सम्मुख उपस्थित हो जाते थे उनकी ओर भी मौन्टेन की लेखनी बढ जाती थी, इस प्रकार वह विषयातर मे भो पड़ जाता था। अनेक बार उसे एक विषयातर से दूसरे और दूसरे से तीसरे की ओर जाते देखा जा सकता है। इससे प्रकट होता है कि मौन्टेन के लिए निबध का विषय केवल आरभ मे लेखनी को उत्तेजित करने वाली एक प्रेरणा मात्र है और एक बार जब उसकी लेखनी चल पडती थी तब वह अन्य प्रेरणाओ के वशीभूत होकर आगे बढ़ती रहती थी। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मौन्टेन की रचनाओं में निबध की शृखला निताात उच्छिन्न है—उसमे विचारों का कोई तारतम्य ही नहीं। यदि ऐसा होता तब तो उसके निबध कलात्मक पूर्णता के अभाव मे साहित्य की भूमि

मे पदार्पण ही न कर पाते, उन्हे विशिष्ट साहित्यिक पद प्राप्त करने का तो प्रश्न ही न होता। वास्तव मे उसके 'एसे' विषय के मुख्य सूत्र को पकड़कर चलते हैं और आत्यनिक रूप मे उसका त्याग कभी नहीं करते। वह विषयातर मे अवश्य चला जाता है किन्तु वहाँ से लौटकर पुनः मुख्य विषय पर पहुँचता है। निबध के समाप्त होने पर हम उसकी अतर्निहित एकता का अनुभव करते हैं।" उसकी शैली आकर्षक तथा भावमय है; उसमे उसके व्यक्तित्व की अमिट छाप है।

इस सबध मे आचार्य प० रामचद्र शुक्ल के कुछ वाक्य बड़े महत्व-पूर्ण हैं, अतः लिखने का लोभ सवरण नहीं कर सकता। "आधुनिक पाश्चात्य लक्षणों के अनुसार निबध उसी को कहना चाहिए जिसमे व्यक्तित्व अर्थात् व्यक्तिगत विशेषता हो। बात तो ठीक है, यदि ठीक तरह से समझी जाय। व्यक्तिगत विशेषता का यह मतलब नहीं कि उसके प्रदर्शन के लिए विचारो की शृखला रखी ही न जाय या जान-बूझकर जगह जगह से तोड़ दी जाय, भावों की विचित्रता दिखाने के लिये ऐसी अर्थ योजना की जाय जो उनकी अनुभूति के प्रकृत या लोक-सामान्य स्वरूप से कोई सबध ही न रखे अथवा भाषा से सरकस वालों की-सी कसरतें या हठयोगियों के-से आसन कराए जायँ जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवा और कुछ न हो।"

"संसार की हर एक बात और सब बातों से सम्बद्ध है। अपने अपने मानसिक सघटन के अनुसार किसी का मन किसी सबध-सूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। ये सबध सूत्र एक दूसरे से नथे हुए, पत्तों के भीतर की नसो के समान, चारों ओर एक जाल के रूप में फैले हैं। तत्वचिंतक या दार्शनिक केवल अपने व्यापक सिद्धातों के प्रतिपादन के लिये उपयोगी कुछ सबध सूत्रों को पकड़ कर किसी ओर सीधा चलता है और बीच के ब्योरों मे कही नहीं फँसता। पर निबध-लेखक अपने मन की प्रवृत्ति के अनुसार स्वच्छद गति से इधर-

उधर फूटी हुई सूत्र-शाखाओं पर विचरता चलता है। यही उसकी अर्थ-सबंधी व्यक्तिगत विशेषता है। अर्थ-सबंध-सूत्रो की टेढ़ी-मेढी रेखाएँ ही भिन्न भिन्न लेखकों का दृष्टिपथ निदिष्ट करती हैं। एक ही बात को लेकर किसी का मन किसी सबध-सूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। इसी का नाम है एक ही बात को भिन्न-भिन्न दृष्टियों से देखना। व्यक्तिगत विशेषता का मूल आधार यही है।"

इसी गुण तथा कला के कारण उसके लेखों मे सुहृन्मण्डली की बातचीत के सदृश मैत्री-सुलभ सहानुभूति के कारण आत्मीयता तथा व्यक्तित्व मिलते हैं। व्यक्तिगत और स्वानुभूत विचारों की नैसर्गिकता तो उनमे रहती ही है। इन्हीं तत्वों के कारण लेखक के साथ उसकी रचना द्वारा पाठक की घनिष्ठता स्थापित हो जाती है। निबध की सब से बड़ी विशेषता, सक्षेप मे, यही है।

हिन्दी-साहित्य में निबंध की कल्पना और प्रारंभिक स्थिति

हिन्दी-साहित्य मे निबध शब्द का प्रयोग बड़ी असावधानता के साथ किया जाता है। "जिस प्रकार किसी उपन्यास का एक परिच्छेद या प्रकरण आख्यायिका नहीं कहा जा सकता, वरन् आख्यायिका कहलाने के लिये उसमे आख्यायिका शैली की विशेषताएँ तथा उसकी कलात्मक पूर्णता आवश्यक है, उसी प्रकार किसी दार्शनिक या साहित्यिक ग्रथ का एक अध्याय निबध के नाम से अभिहित नहीं हो सकता।" किन्तु हिन्दी मे अभिभाषण, व्याख्यान, मासिक पत्रिकाओ के साधारण लेख, समालोचनात्मक प्रबध—यहाँ तक कि वार्तालाप और सवाद तक को भी कभी कभी साहित्यिक सम्मान प्रदान करने की अभिलाषा से निबध सज्ञा दे दी जाती है। परन्तु निबध और ऐसे लेखो मे अतर है। पाश्चात्य दृष्टिकोण से तो उनका लक्ष्य भी भिन्न ही है। वहाँ के निबधो का प्रमुख अग आत्मचरित्र-चित्रण है। इस लक्ष्य-प्राप्ति के लिये यूरोप के निबधकार कभी कभी कल्पित पात्र के नाम से भी लिखते हैं यथा चार्ल्स लैम्ब (इलिया), ए० जी० गार्डनर (अल्फा आफ द प्लाउ), आदि अन्यथा आत्मप्रशसा पाठकों को असतुष्ट रखती है और आत्मनिदा आत्मतुष्टि मे बाधक होती है। हिन्दी मे भी 'आत्माराम' 'भुजगभूषण 'भट्टाचार्य' आदि दो एक कल्पित नामों से लिखे निबध मिल जायँगे, किन्तु भारतवर्ष का दृष्टिकोण ही भिन्न है। सच तो यह है कि यदि पश्चिम की इस विशुद्ध परिभाषा वाले निबधों की कसोटी पर हम हिन्दी के निबध साहित्य को कसेंगे, तो न केवल हमारा दृष्टिकोण सकुचित हो

जायगा वरन् हमे दस पाँच निबधों तथा दो एक निबधकारों (प्रताप नारायण मिश्र आदि) को छोड़कर कुछ भी साहित्य न मिलेगा। अतः निबध शब्द से हमारे हिन्दी के प्रमुख आचार्य, विद्वान्, तथा समालोचक जिस प्रकार के लेख का अभिप्राय रखते हैं, उसी तुला पर हम अपने निबध साहित्य को तोलेंगे। हाँ निबध के प्रधान गुणों—आत्मीयता तथा व्यक्तित्व—पर हमे अपनी दृष्टि रखनी ही होगी, चाहे वे पश्चिम से ही क्यों न आए हों। यत्र तत्र तुलनात्मक समीक्षा के लिए पश्चिम के दृष्टिकोण का भी प्रश्रय लिया जायगा।

जिस प्रकार किसी भी भाषा के साहित्य मे पद्यात्मक रचनाए गद्य से पहले निःस्यूत होती है, उसी प्रकार गद्य साहित्य मे कथा-कहानी, नाटक-उपन्यास आदि, सुष्ठु साहित्यिक निबधो से पहले प्रसूत होते हैं। कारण स्पष्ट ही है कि आख्यायिका या उपन्यास मे यदि भाषा-शैथिल्य या विचारविशृङ्खलता भी होगी, तो भी पाठक का मनारजन हो जायगा किन्तु निबध के लिए तो एक विवेचना के उपयुक्त परिमार्जित शैली होनी चाहिए, तथा निबध लेखक को अपने वैयक्तिक दृष्टिकोण से किसी 'वस्तु' पर चलना आवश्यक है, फिर विस्तृत अध्ययन, सूक्ष्म अन्वीक्षण, गभीर चितन तथा मनन भी तो अपेक्षित हैं—और ये तत्व गद्य साहित्य की प्रारभिक अवस्था मे दुष्प्राप्य हैं।

इसीलिए साधारण लेखो की तो बात दूसरी है किन्तु साहित्यिक निबधो का हमारे यहाँ कुछ ही काल पूर्व तक प्रायः अभाव था। सस्कृत साहित्य मे भी निबध या प्रबध नाम से जो रचनाएँ अभिहित होती थी वे आधुनिक निबंध-सज्ञा-प्राप्त लेखों से नितात भिन्न रहती थीं। सस्कृत वाङ्मय मे निबध केवल सूक्ष्म दार्शनिक विश्लेषण के लिए प्रयोग मे लाया जाता था। फलतः वे बुद्धि-विशिष्ट, रूक्ष एवं वैज्ञानिक कोटि मे ही रखे जा सकते हैं। "साहित्य की रसात्मकता का उनमे बहुत कुछ अभाव रहा, न तो उनमे व्यक्तित्व की कोई चमत्कार पूर्ण

मुद्रा दिखाई दी और न उनमे भावना प्रधान शैली का प्रवेश ही हो पाया।"

अतः काव्य, नाटक कथा कहानी आदि तो हिन्दी साहित्य को सस्कृत से पैतृक सपत्ति के रूप मे मिल गये किन्तु निबध के नाम पर उसे 'निबध' नाम के अतिरिक्त और कुछ न मिला। सस्कृत मे प्रबन्ध शब्द भी अत्यत प्रयुक्त हुआ है। परन्तु हिन्दी के शैशवकाल मे इन दोनों शब्दों के आशय मे कुछ अतर माना जाने लगा था। सबद्ध विचार तथा विषय वाली एक व्यापक रचना प्रबध कहाती थी जिसमे गभीरता पूर्वक किसी विषय के स्वरूप या महत्व आदि का प्रतिपादन किया गया हो और निबध एक व्यक्तित्व प्रधान सक्षिप्त एव स्वतत्र तथा उपर्युक्त 'शिथिलता' पूर्ण रचना ही समझी जाती थी। परन्तु आजकल उलटा हो रहा है। निबध शब्द प्रबध के ही अर्थ मे प्रयुक्त होने लगा है। "सस्कृत के आचार्यों ने निबध को बौद्धिक अभिव्यक्ति का साधन बनाया था, समस्त दार्शनिक विश्लेषण छदों मे हुआ था, पर थे ये निबध ही।" शैली जटिल एव सूत्रवत् थी और सभी आलेख रूखे, वैज्ञानिक और बुद्धिप्रधान थे। जितने प्रबध गद्य में भी लिखे गए वे भी इतने रूखे और शुद्ध तार्किक थे कि साहित्य की कोटि मे न आ सके।

हिन्दी मे प्रबधों की अवतारणा पाश्चात्य प्रबधों के अनुसार हुई, सस्कृत के आदर्श के अनुकूल नहीं। अतः जो कुछ निबध साहित्य इस समय तक हमे हिन्दी मे प्राप्त होता है वह सब उसकी अपनी अर्जित सपत्ति है। इसीलिए हिन्दी-निबध का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। प्रातः स्मरणीय भारतेन्दु बाबू हरिश्चद्र ने जहाँ हिन्दी साहित्य के जीवन के साथ जाकर उसे अनेक नवीन पथों का पान्थ बनाया, और कविता नाटक आदि मे परोक्षापरोक्ष रूप से एक नवीन युग का प्रवर्तन किया, वही निबध भी उनकी प्रतिभा तथा साहित्य प्रेम के फल-

स्वरूप जन्म पा सका । यह सत्य है कि उन्होंने कोई अच्छे साहित्य-कोटि के निबंध नही लिखे, किन्तु यह निबध का जन्मकाल था। उनकी अपनी रचना से अधिक उनकी प्रेरणा द्वारा प्रसूत रचना का महत्त्व है । उन्ही के प्रभाव मे आकर प० बदरीनारायण चौधरी, ला० श्रीनिवास दास, प० गोविन्दनारायण मिश्र, बा० तोताराम, मु० ज्वाला प्रसाद, प० प्रतापनारायण मिश्र, प० अम्बिकादत्त व्यास, प० केशवराम भट्ट आदि कई अच्छे लेखक तैयार हो गए थे । इनमे से चौधरी जी, बा० तोताराम, व्यास जी प० प्रतापनारायण आदि कुछ लोग पत्र सपादक थे, किन्तु अन्य लेखक भा यदा कदा एक-आध निबध सामयिक पत्रिकाओं म लिख देते थे।ये लेखक "स्थायी विषयों के साथ साथ समाज की जीवनचर्या, ऋतुचर्या, पर्वत्यौहार, आदि पर भी साहित्यिक निबध लिखते आ रहे थे । उनके लेखों मे देश की परपरागत भावनाओं और उमगों का प्रतिबिंब रहा करता था । होली, विजया-दशमी, दीपावली, रासलीला इत्यादि पर लिखे उनके प्रबधों मे जनता के जीवन का रग पूरा पूरा रहता था। इसके लिए वे वर्णनात्मक और भावात्मक दोनों विधानों का बड़ा सुन्दर मेल करते थे ।"

किन्तु इस प्रकार के लेखों की परम्परा बहुत शीघ्र बंद हो गई, या कम से कम बहुत कुछ कम हो गई । यहाँ एक बात का सकेत करना आवश्यक है कि ये थोड़े बहुत लेख या निबध जो कुछ मिलते भी हैं उनमे निबध की भिन्न भिन्न शैलियाँ या विशेषताएँ दृष्टिगोचर नहीं होतीं । कारण स्पष्ट है कि प्रथम तो अधिकाश लेखक निबध कला से ही अवगत नहीं थे—दूसरे निबध रचना की ही ओर प्रवृत्ति रख कर किसी ने दृढ प्रयत्न नही किया । प० रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों से उपर्युक्त कथन स्पष्ट हो जायगा । वे शब्द ये हैं:—

"बहुत से लेखकों का यह हाल रहा कि कभी अखबारनवीसी करते, कभी उपन्यास लिखते, कभी नाटक मे दखल देते, और कभी

कविता की आलोचना करते और कभी इतिहास और पुरातत्व की बातें सामने लाते ।"

इसीलिए तत्कालीन लेखकों मे भाव गाभीर्य या मौलिक विचारावली की उतनी प्रधानता नहीं है जितनी शब्द जाल या अनुप्रासप्रियता की। अनेक लेखक व्यर्थ की ही भूमिका बाधते थे "कुछ तो अपने निबधो का प्रारम्भ 'कोटिशः धन्यवाद उस परम पिता परमेश्वर को है' आदि शब्दों से करते थे ।...... रूढिगत धार्मिकता तथा भावुकता का प्रकाशन भी अधिक मात्रा म किया गया था ।"

इस सामूहिक प्रवृत्ति के दिग्दर्शन के अनन्तर अब लेखको की व्यक्तिगत विवेचना करना उचित ही होगा । इन्हीं लेखकों मे से कई एक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक थे । अतः उनके सपादकत्व मे उनकी पत्रिकाओं के द्वारा 'अग्रलेख' के रूप म किस प्रकार निबध का विकास हुआ, इसके भी निदशन का प्रयत्न किया जायगा ।

निबंध का जन्म और भारतेन्दु काल

बा० हरिश्चन्द्र से पूर्व स्वामी दयानद सरस्वती तथा उनका प्रतिवाद करनेवाले प० श्रद्धाराम फुल्लौरी ने धार्मिक एव साप्रदायिक दृष्टिकोण से खण्डन मण्डन करने वाले सस्कृत की प्राचीन शैली पर कुछ लेख लिखे थे, भाषा की दृष्टि से ये अच्छे भी हैं, किन्तु इन्हें साहित्यिक लेख-कोटि मे नहीं रखा जा सकता है, अतः बा० हरिश्चन्द्र से ही हम निबध का जन्म मानकर आगे बढते हैं।

इन बाबू साहब की ख्याति नाटकों के सृजन करने, कविता की भाषा मे स्थिरता एवं नवजीवन लाने तथा हिन्दी गद्य-साहित्य की स्वतंत्र सत्ता का भाव प्रतिष्ठित करने मे ही अधिक है, किन्तु 'कवि वचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र चद्रिका', 'बाला बोधिनी' के सम्पादक के स्तर से उन्होंने अनेक लेख भी लिखे थे। ये लेख या तो तत्कालीन धार्मिक, राजनीतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का चित्र ही अधिक अकित करते हैं, या किसी साधारण किन्तु स्थायी विषय का विवेचन करते हैं। इनमें मौन्टेन के समान व्यक्तित्व या मौलिकता यद्यपि नहीं के बराबर रहती थी तथापि ये हिन्दी-निबध के भविष्य को पूर्णतया सूचित करते हैं। इनके अधिकाश लेख हरिश्चद्र कला भाग ४ मे सगृहीत है। इनमे 'इॅग्लैण्ड और भारतवर्ष' 'हम मूर्तिपूजक है' 'श्रुतिरहस्य' 'एक अपूर्व स्वप्न' सूर्योदय' 'होली' 'त्योहार' 'भूकम्प' 'मित्रता' 'खुशी' 'अपव्यय' और 'सगीतसार' प्रमुख हैं। नीचे इनके सगीतसार तथा खुशी नामक दो निबधो से थोड़ा सा अंश उद्धृत किया जाता है जिससे इनके वाक्य-विन्यास तथा भाव-प्रकटीकरण पर प्रकाश पड़ेगा। सगीतसार वाले उद्धरण मे 'प्रबंध' शब्द पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योंकि इससे यह स्पष्ट है कि

भारतेन्दु जी अपने लेख की रचना प्रवध की दृष्टि मे करते थे। 'खुशी' एक १५ पृष्ठों का लम्बा सा निवध है, किन्तु उसमे वास्तविक निबध के गुण सर्वथा उपस्थित हैं। उसकी भाषा हिन्दी की अपेक्षा उर्दू के अधिक निकट है, अतः उसके भारतेन्दु रचित होने म यद्यपि सन्देह होता है किन्तु लिखा उन्ही ने था, और 'हरिश्चन्द्र कला' मे सगृहीत होना इसका प्रमाण है।

"भारतवर्ष की सब विद्याओ के साथ यथाक्रम सगीत का भी लोप हो गया। यह गानशास्त्र हमारे यहाँ इतना आदरणीय है कि सामवेद के मत्र तत्र गाए जाते हैं। हमारे यहाँ वरच यह कहावत प्रसिद्ध है 'प्रथमनाथ तब वेद'। अब भारतवष का सपूर्ण सगीत केवल कजली ठुमरी पर आरहा है। तथापि प्राचीन काल मे यह शास्त्र कितना गभीर था यह हम इस लेख म दिखलावेगे।"

× × ×

"हमारे प्रवध से बढने वालों को एक ही रागनी का नाम बारंबार कई रागों मे देखकर आश्चर्य होगा। यह हमारा दोष नहीं, यह संगीत-सार के प्रचार की न्यूनता से ग्रन्थों मे गड़बड हो गई है। कोई अन्वेषण करने वाला हुआ नहीं जो... . ... .।"

('सगीत सार' से)

"ख्वदिल ख्वाह आमूदगी को खुशी कह सकते हैं, यानी जो हमारे दिल की ख्वाहिश हो वह कोशिश करने से या इत्तफाकिया वगैर कोशिश किए आवे तो हमको खुशी हासिल होती है।

इसी खुशी के हम तीन दर्जे कायम कर सकते हैं याने आराम, खुशी और लुत्फ।........

इसी से हम कहते हैं कि खुशी से मरतबः से कुछ वास्ता नहीं खुशी एक नेअमते उज़मा है जिसे हर शख्स नहीं पाता।

(खुशी से)

भारतेन्दु जी की शैली मे लल्लूलाल का व्रजभाषापन नहीं है मु० सदासुखलाल का पण्डिताऊपन नहीं है, सदलमिश्र का पूर्वी-पन भी नहीं मिलता है, इंशा अल्ला खाँ का चुलबुलापन भी नहीं, तथा शिवप्रसाद जी का उर्दूपन भी सर्वत्र उतना नही, और राजा लक्ष्मण सिह का 'खालिसपन' भी नहीं है। भाषा सुबोध है, उसमे फारसी अरबी के शब्द होने पर भी वह हिन्दी ही है। परन्तु भाषा के ये गुण उनके नाटको के गद्य मे ही हैं, निबंधों की भाषा मे वह प्रवाह और वह टकसालीपन नहीं है कदाचित् वे कार्य भार एव स्वच्छद स्वभाव के कारण उन अशुद्धियों के दूर करने की चिता भी न करते थे। "उनकी भावावेश की शैली दूसरी है, और तथ्यनिरूपण की शैली दूसरी। भावावेश की भाषा मे वाक्य बहुत छोटे छोटे होते हैं, पदावली सरल बोलचाल की होती है, जिसमे बहुत प्रचलित साधारण अरबी फारसी के शब्द भी कभी कभी, पर बहुत कम, आ जाते हैं। जहाँ चित्त के किसी स्थायी क्षोभ की व्यजना और चिंतन के लिए कुछ अवकाश है, वहाँ की भाषा कुछ अधिकसाधु और गभीर तथा वाक्य कुछ बड़े हैं, पर अन्वय जटिल नहीं है।"

निबंध का विकास

बालकृष्ण भट्ट; हिन्दी प्रदीप

भारतेन्दु जी के उपरात उन्हीं के समकालीन प० प्रतापनारायण मिश्र तथा प० बालकृष्ण भट्ट के नाम निबध लेखकों मे चिरस्मरणीय रहेंगे। एडीसन और स्टील के युग्म के समान ही हिन्दी मे इन दोनों की जोडी है। इन दोनों मे भी एडीसन के समान भट्ट जी का स्थान कुछ ऊँचा है। भट्ट जी को यदि हम साहित्यिक निबध का जन्मदाता कहें, तो कोई भी अत्युक्ति नहीं होगी। यह प्रतापनारायण जी से कुछ पहले भी हुए और इनकी रचना भी मिश्र जी से अधिक एव सुरुचि सम्पन्न है, अतः पहले हम इन पर विस्तार के साथ विचार करेंगे। तथा यहीं पर भट्ट जी द्वारा सपादित 'हिन्दी प्रदीप' से निबध का विकास कैसे हुआ, यह भी देखेंगे।

उक्त हिन्दी प्रदीप के बत्तीस वर्षों के जीवन मे भट्ट जी ने दो सौ से अधिक अच्छे अच्छे निबध लिखे थे। ये प्रायः सभी हिन्दी साहित्य के अमर रत्न रहेंगे। किन्तु खेद है कि २५ निबधों का एक संग्रह[1] 'साहित्य सुमन' के नाम से जो निकला है उसके अतिरिक्त भट्ट जी के कम से कम १०० निबध 'हिन्दी' प्रदीप' की पुरानी प्रतियों में ऐसे होंगे जिनका प्रकाशित होना नितात आवश्यक है। एक तो वैसे ही हिन्दी मे निबध-साहित्य की इतनी शोचनीय दशा है उस पर हिंदी

---

[1]सुनते हैं कि कोई एक संग्रह और भी प्रकाश मे आया है, परन्तु उसे देखने का मुझे सौभाग्य नहीं प्राप्त हो सका है।

प्रेमियों की यह उपेक्षा तो और भी खटकती है। यदि ये निबंध अपने यथावत् रूप मे हिन्दी ससार के सम्मुख रखे जायँ तो न केवल उसका मनोरजन होगा प्रत्युत उक्त लेखो से एक प्रेरणा, एक उत्साह भी मिलेगा कि ऐसे छोटे छोटे विषयो पर भी ऐसी सुन्दरता के साथ लिखा जा सकता है, हिन्दी-साहित्य-भण्डार तो सपन्न होगा ही। उपर्युक्त सग्रह मे जो पच्चीस निबंध प्रकाशित भी हुए हैं उनका सपादन देख कर तो और भी दुख तथा क्षोभ होता है, क्योकि न जाने कितने वाक्य के वाक्य छोड़ दिये गए हैं; साथ ही अनुच्छेदों (Paragraphs) का निर्माण, विराम चिह्नो का प्रयोग, अनेक पूर्वी या भट्ट जी के विशिष्ट शब्दो को आधुनिक खड़ी बोली का जामा पहना कर जो 'शुद्धि' की गई है, वह तो और भी चिंतनीय है।

यहाँ पर स्थान सकोच के कारण उन सब निबंधों की सूची तो नहीं दी जा सकती, फिर भी कुछ निबधों के नामों को देख कर ही अनुमान किया जा सकता है कि वे भट्ट जी के व्यक्तित्व तथा मनोरजक एव मुहावरेदार शैली के मेल मे आकर कितने सुन्दर उतरे होंगे। कुछ नाम ये हैं :—

'पैसा', 'नहीं', 'दीर्घायु', 'वकील', 'इङ्गलिश पढ़े सो बाबू होय', 'पसद', 'प्रीति', 'बाल्यावस्था', 'स्वप्न', 'दम', 'दोस्ती', 'माँ', 'नाम', 'पुनर्जन्म', 'अभिलाषा', 'ल', 'एक पत्नीव्रत', 'रोटी तो किसी भाँति कमा खायँ मुछदर।'

ऊपर का नामावली इस दृष्टि से दी गई है कि उसमे व्यंग्यपूर्ण, गभीर, विवरणात्मक, भावात्मक आदि कई प्रकार के जो भट्ट जी के लेख हैं वे सभी आ जायँ। इनके अतिरिक्त 'कुलीनता', 'सहानुभूति', 'मन और नेत्र', 'मनोविज्ञान', 'चरित्र पालन', 'महाजन' आदि लगभग दो दर्जन लेख तो—क्या भाषा की दृष्टि से, क्या भाव की दृष्टि से—किसी भी भाषा के उच्चकोटि के साहित्यिक निबधो के समकक्ष रखे जा सकते हैं।

प्रथम निबध समुदाय मे से 'वकील' का एक अश यहाँ दिया जाता है और दूसरे मे से 'मनोविज्ञान' का। इन उद्धरणो से लेख के बढ़ जाने का अवश्य भय है, किन्तु बिना इनके वास्तविक स्थिति से परिचय भी नहीं हो सकता।

"यह जानवर ब्रिटिश राज्य के साथ ही साथ हिन्दुस्तान में आया है—पुराने आर्यो के समय कही इनका पता भी नहीं लगता। मुसलमानों की सल्तनत मे भी वकील वही कहलाते थे जो छोटे राजा या रईसों की ओर से किसी चक्रवर्ती बड़े राजा के दरबार मे रहा करते थे पर किसी न्यायकर्त्ता के सामने वादी प्रतिवादी की ओर से अब के समान वादानुवाद से उस वकील को कोई सरोकार न था।"

'वकील'—से

"साधारण रीति पर विचार करने से निश्चय होता है कि हम लोगों का समस्त ज्ञान दो प्रधान भागो मे विभक्त है। पहला मूर्ति-विषयक अर्थात् जड़ जगत् सबधीय (?) और दूसरा अमूर्ति विषयक अर्थात् अतर्जगत् संबधीय। अग्रेजी मे इन दोनों को (Objective) और Subjective ज्ञान कहते हैं। पदार्थों के कुछ थोड़े से गुणों के अतिरिक्त मूर्ति अमूर्ति का मुख्य तत्व क्या है, हम कुछ नहीं जानते। जैसा गुलाब के कहने से केवल एतना (?) ही जान पड़ेगा कि जिस पदार्थ की आकृति गोल और जिसका रग कुछ लाल और जिसमे एक प्रकार की मीठी सुगध भी हो, उसका नाम गुलाब है। इस स्थल पर गोलाई, ललाई और सुगध इत्यादि कई गुणों ही को हमने गुलाब इस नाम से लिखा किन्तु वह वास्तव मे क्या पदार्थ है इस तत्व का कुछ भी निश्चय न हुआ।........."

'मनोविज्ञान'—से

भट्ट जी के द्वारा हिन्दी प्रदीप मे, प० प्रतापनारायण मिश्र द्वारा "ब्राह्मण" में, तथा पं० बदरीनारायण चौधरी द्वारा "आनद

कादंबिनी मे कुछ लेख मुखपृष्ठ पर ही लिखे जाते थे। इन लेखों मे छोटे छोटे विषयों को लेकर ये लेखक अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण से कुछ विचार प्रकट करते थे। तीनों ही प्रतिभासपन्न थे अतः जहाँ से भी लिखने बैठ गए, वहीं से अनेक प्रासगिक अप्रासगिक विषयों पर मित्र-मडली के समान स्वच्छद विचार प्रकट करते चले गए। हृदय-द्वार उन्मुक्त कर दिया, पाठक से घनिष्ठता स्थापित होगई एव निबध के वास्तविक गुण आ गए। विषय-विवेचन मे लेखक का अपना दृष्टि-कोण होने के कारण मौलिकता रहती थी तथा लेखक का व्यक्तित्व एवं आत्मीयता भी भरपूर होती थी। इस दृष्टि से या तो तीनों ही लेखकों के नाम हिन्दी के निबध साहित्य के उन्नायकों तथा उसका भरण-पोषण करने वालो के रूप मे चिरस्मरणीय रहेंगे, किन्तु भट्ट जी का स्थान सर्वोच्च है। उन्होंने रचना भी अधिक परिमाण मे की, भाषा भी उनकी औरों की अपेक्षा अधिक सयत, प्रवाहमयी एव मुहावरेदार है, तथा समय भी उनका तीनो मे कुछ पहले ही है। अतः उनकी और उनके 'हिन्दी-प्रदीप' की चर्चा आरभ होती है।

हिन्दी प्रदीप मे 'अग्रलेख' के रूप मे प्रकाशित कुछ लेख ये हैं:—

"नहीं" "माधुर्य" "देश या जाति के अधःपात के साथ उसका पौरुषेय गुण भी चला जाता है" "मनुष्य की बाहरी आकृति मन की एक प्रतिकृति है" "स्थिर अध्यवसाय या दृढ़ता" "सभ्यता और साहित्य" "कल्पना शक्ति" "ग्रामीण भाषा" "धर्म का महत्व" "आत्म-निर्भरता" "राजा" "जवान" "फकीरी" "महाजन" "मन की दृढता" "सभाषण"।

यों तो लगभग इतने ही लेख और इसी रूप मे प्रकाशित हुए हैं, किन्तु इस नामावली तथा विषय-भिन्नता पर दृष्टि डालकर ही अनुमान किया जा सकता है कि भट्ट जी तथा 'हिन्दी-प्रदीप' के द्वारा कैसे निबधों का स्वरूप निखरा। अतिम छः लेख तो बड़े ही अच्छे बन पड़े

हैं। इनमे भट्ट जी का व्यक्तित्व भी स्पष्ट झलक रहा है, और शैली भी प्रौढ है। लिखते समय आप अपना हृदय कपाट खोलकर रख देते हैं। भावगोपन की प्रवृत्ति का तो आप मे नितात अभाव है।

"आत्मनिर्भरता" से थाड़ा सा अश उदाहरणवत दिया जाता है:—

"बहुधा देखने मे आता है कि किसी काम के करने मे बाहरी सहायता इतना लाभ नहीं पहुँचा सकती, जितनी आत्मनिर्भरता। समाज के बधन मे भी देखिए ता बहुत तरह के सशोधन सरकारी कानूनो के द्वारा वैसे नहीं हो सकते, जैसा समाज के एक एक मनुष्य का अलग अलग अपना सशोधन अपने आप करने मे हा सकता है। कड़े से कड़ा कानून आलसी समाज को परिश्रमी, अपव्ययी या फिजूलखर्च को किफायतशार या परिमित व्ययशील, शराबी को परहेजगार ..... इत्यादि नही बना सकता। किन्तु ये सब बाते हम अपने ही प्रयत्न और चेष्टा से अपने मे ला सकते हैं। सच पूछो तो जाति या कौम भी सुधरे हुए ऐसे एक एक व्यक्ति की समष्टि है।"

यह तो हुई भट्ट जी के विचारशील निबध की बात। यदि उनकी कल्पना की अद्‌भुत छटा देखना हो ता चद्रोदय नामक लेख मे देखिए।

यहाँ पर हमे इस बात का ध्यान रखना होगा कि भट्ट जी के समय में हिन्दी गद्य साहित्य कोई उन्नत अवस्था मे नहीं था, अतः भट्ट जी के लेख गंभीरता तथा मननशीलता के परिणाम-स्वरूप नहीं लिखे गए थे वरन् छोटे छाटे लेखों द्वारा अनेक बातों का ज्ञान कराना तथा मनोरजन इन्हीं दो उद्देश्यों से उनके निबध लिखे जाते थे। 'तो निश्चय हुआ', "तापत्र्य यह निकला" के समान खड वाक्यो का पुनः पुनः प्रयोग भी यही सूचित करना है कि लेखक प्रारभिक शिक्षावाले बच्चों को यःकश्चित् ज्ञान कराने के समान नितात साधारण तथा प्रारभिक बातों के बताने में प्रयत्नशील है। भट्ट जी के कुछ निबधों के शीर्षक

भी बड़े विचित्र हैं, जैसे 'प्रेम के बाग का सैलानी', "कवि और चितेरे की डाडा मेड़ी", "पुरुष अहेरी की स्त्रियाँ अहेर हैं।"

भट्ट जी के गद्य प्रबधो के विषय सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक सभी प्रकार के हैं। अपनी भाषा मे उन्होने कहावतों और मुहावरों का अधिक और अच्छा प्रयोग किया है। पूर्वी प्रयोग भी कभी कभी मिल जाते हैं। भट्ट जी की भाषा यद्यपि सस्कृत प्रधान है, परन्तु उसमे अनेक अग्रेजी एव उर्दू फारसी के बड़े बड़े शब्द भी यथास्थान रखे मिलते हैं। पद पद पर मैकाले, एडीसन, जानसन के सदृश अग्रेजी लेखको तथा कालिदास भवभूति के सदृश सस्कृत कवियों का निर्देश करना इस बात का पूर्ण परिचायक है कि उक्त दोनों साहित्यों के भट्ट जी अगाध विद्वान् थे।

पं० प्रताप नारायण मिश्र तथा उनके समकालीन अन्य लेखक

प० बालकृष्ण जी के उपरान प० प्रताप नारायण मिश्र का स्थान भी बडा महत्त्वपूर्ण है। ये 'ब्राह्मण' नामक पत्र का संपादन करते थे। इनके लेखों मे विनोद की मात्रा अधिक मिलती है, इससे लेखक के साथ पाठक की घनिष्ठता स्थापित हो जाती है। मिश्र जी के लिए विषय कोई भी हो वे उसे अपने व्यक्तित्व से विनोदपूर्ण और मनोरजक बना लेते थे। इसीलिए इनके निबधों की सूची में "देशदशा, समाज-सुधार, नागरी हिन्दी-प्रचार साधारण मनोरजन आदि" सब प्रकार के लेख मिलते हैं। गभीर तथा साधारण दोनों प्रकार की शैलियाँ उनमे हैं। उनके निवधों के तीन सग्रह अब तक प्रकाशित हुए हैं "निबधनवनीत", "प्रताप पीयूष" और "प्रताप समीक्षा"। पहले मे ४१ निबध हैं। दूसरे सग्रह मे अधिकाश तो इन्हीं म से हैं किन्तु चार छः नये भी हैं जैसे 'खुशामद', 'शिवमूर्ति', 'सोने का डडा और पौडा' 'दो' आदि। इसी प्रकार प्रताप समीक्षा मे केवल तीन निबध—वृद्ध, काल, और बात—नए हैं, शेष ऊपर के दोनों सग्रहों में आ चुके हैं।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि भट्ट जी के समान मिश्र जी के निबधों के विषय मे साहित्य-प्रेमी उदासीन नहीं हैं, किन्तु फिर भी अच्छा होता है यदि मिश्र जी के सदृश एक उत्कृष्ट निबधकार के इन तीन संग्रहों मे प्रकाशित तथा अन्य निबध जो 'ब्राह्मण' मे तो समय समय पर निकले हैं किन्तु पुस्तकाकार नहीं हो पाए हैं, उन सब का वैज्ञानिक रीति से एक पुस्तक मे सपादन कर दिया जाय। साथ ही उसी मे या प्रथक् एक विस्तृत समालोचना भी लिखी जाय जिससे पडित जी की सपूर्ण निबध सामग्री से साधारणजन भी परिचित हो जायँ। पाश्चा-

त्य देशों मे छोटे से छोटे लेखक के लेख कितने उत्साह के साथ पुस्तकाकार किए जाते हैं और उसकी मूल रचना से अधिक उस पर समालोचनात्मक ग्रथ लिखे जाते हैं किन्तु हमारे देश मे हिन्दी के एक प्रमुख निबधकार के लेखों की यह दशा है कि उसके लेख भी एकत्रित नही किए गए हैं। मेरी दृष्टि से तो जिन तत्वों के आधार पर अग्रेजी मे वास्तविक निबधकारों की कोटि मे चार्ल्स लैम्ब को एक प्रमुख स्थान दिया जाता है, उसी आधार पर, निबंध की उस प्रारभिक परिभाषा को मान कर, मिश्र जी को भी हिन्दी के निबधकारों मे सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

मिश्र जी के अप्रकाशित निबधो में से कुछ बहुत ही सुन्दर लेखों के नाम ये हैं :—"जुवा", "उपाधि", "प्रताप चरित्र" "ता", "नास्तिक", "आप बीती कहूँ कि जग बीती", "अपव्यय", "चिंता" "मन", "छल", "ईश्वर की मूर्ति", "लडते हैं पर हाथ मे तलवार भी नही है", "विश्वास", "छै ! छै !! छै !!!", 'वज्र मूर्ख', 'पेट', 'सत्व', 'आत्मीयता', 'होली है अथवा होरी है', 'स्वार्थ', 'भलमसी', 'दान', "घूरे क लत्ता विनै कनातन का डौल बाँधै", "टेढ जानि शका सब काहू", 'मुच्छ'।

श्री प्रतापनारायण जी एक कान्य कुब्ज ब्राह्मण थे। ब्राह्मणों में कन्या का विवाह कितनी कठिनता से होता है इसका ध्यान रख कर 'उपाधि' निबध को पढ़िए, मिश्र जी का समस्त निबध कौशल प्रकट हो जायगा। प्रकाशित निबध तो उनकी उक्त तीन पुस्तकों मे देखे ही जा सकते हैं, किन्तु कलेवर-वृद्धि की आशंका को छोड़कर यहाँ उनका 'उपाधि' नामक एक अप्रकाशित निबध आद्योपात लिखा जा रहा है, क्योंकि मिश्र जी एक उत्कृष्ट निबधकार हैं और उक्त निबध उनका एक श्रेष्ठ निबध है, अतः पाठक क्षमा करेंगे।

'उपाधि'

'यद्यपि जगत मे और भी अनेक प्रकार की आधिव्याधि हैं पर उपाधि सब से भारी छूत है। सब आधिव्याधि यतन करने तथा ईश्वरेच्छा से टल भी जाती हैं पर यह ऐसी आपदा है कि मरने ही पर छूटती है, सो भी क्या छूटती है नाम के साथ अवश्य लगी रहती है हाँ यह कहिए कि सताती नहीं है यदि मरने के पीछे भी आत्मा को कुछ करना धरना तथा आना जाना या भोगना-भुगतना पड़ता होगा तो हम जानते हैं उस दशा मे भी यह राँड पीछा न छोड़ती होगी, दूसरी आपदा छुट जाने पर तन और मन प्रसन्न हो जाते हैं पर यह ऐसा गुड भरा हँसिया है कि न उगलते बने न निगलते बने उपाधि लग जाने पर उसका छुडाना महा कठिन है; यदि छूट जाय तो जीवन को दुःखमय कर दे ससार भर मे थुड़ थुड़ रहे और बनी रहे तो उसका नाम ही उपाधि है। हमारे कनौजिया भाइयो मे आज विद्या, बल, धन, इत्यादि कोई बात बाकी नहीं रही केवल उपाधि ही मात्र शेष रही है ककहरा भी नहीं जानते पर द्विवेदी, चतुर्वेदी, त्रिवेदी, त्रिपाठी आदि उपाधि बनी हैं पर इन्हीं के अनुरोध से बहुतेरे उन्नति के कामों से वचित हो रहे हैं न विलायत जा सके न एक दूसरे के साथ खा सके, न छोटा मोटा काम करके घर का दरिद्र मिटा सके परमेश्वर न करे यदि इस दीन दशा मे कोई कन्या हो गई तो और भी कोढ़ मे खाज हुई। घर मे धन न ठहरा बिना धन बेटी का व्याह होना कठिन है, उतर के व्याह दे ता नाक कटती है न व्याहें तो इज्ज़त धर्म पुरखों के नाम में बट्टा लगने का डर है यह सब आफतें केवल उपाधि के कारण हैं। शास्त्रों में उपाध्याय पढानेवाले को कहते हैं यह पद बहुत बड़ा है पर उपाधि और उपाध्याय दोनों शब्द बहुत मिलते हैं इससे हमारी जाति मे उपाध्याय एक नीच पदवी (धाकर) मान ली गई है इस नाम

के मेल की बदौलत एक जाति को नीच बनाना पडा पर नीच बनने पर भी छुटकारा नहीं है वे धाकर है उन्हे बेटी ब्याहने मे और भी रुपया चाहिए वरच बेटा व्याहने के लिए भी कुछ देना ही होता है। यह दुहरा घाटा केवल उपाधि के नाम का फल है। हमारे बगाली भाई भी कान्यकुब्ज ही कुल के हैं पर उन्होंने मुखोपाध्याय, चट्टोपाध्याय इत्यादि नामो मे देखा कि उपाधि लगी है कौन जाने किसी दिन कोई उपाधि खडी कर दे इसमे बुद्धिमानी करके नाम ही बदल डाले मुकरजी चटरजी आदि बन गए यह बात कुछ कनौजियों मे ही नहीं है जिसके नाम मे उपाधि लगी है उसको सदा उपाधि लगी रहेगी। आज आप पडितजी, बाबू जी, लालाजी, शेखजी आदि कहलाते हैं बड़े आनद मे है चार जजमाना को अशीर्वाद दे आया कीजिए या छोटा मोटा धन्धा या दस पाँच की नौकरी कर लिया कीजिए परमात्मा खाने पहनने को दे रहेगा, खाइए पहिरिए पाँव पसार के सोइए, 'न ऊधव के लेने न माधव के देने' पर यदि प्राज्ञ, विद्यासागर, बी०ए०, एम० ए० आदि की उपाधि चाहनी है तो किसी कालेज मे नाम लिखाइए परदेस जाइए 'नीद नारि भोजन परिहरही' का नमूना बनिए पाँच सात बरस मे उपाधि मिल जायगी पर साथ ही यह उपाधि लग जायगी कि घर मे चाहे खाने को न हो पर बाहर बाबू बन के निकलना पड़ेगा—चाहे भूखो मरिए पर धन्धा कोई न कर सकिएगा नौकरी भी जब आपके लायक मिलेगी तभी करना नही तो 'बात गए कछु हाथ नहीं है' एक प्रकार की उपाधि सरकार से मिलती है यदि उसकी भूख हो तो हाकिम की खुशामद तथा गौरागदेव की उपासना मे कुछ दिन तक तनमन धन से लगे रहिए कभी न कभी आपके नाम मे सी० यस० आई० अथवा ए बी सी के किसी अक्षर का पुछल्ला लग जायगा अथवा राजा, राय बहादुर, खाँ बहादुर अथवा महामहोपाध्याय की उपाधि लग जायगी पर यह न समझिए कि राजा कहलाने के

साथ कही की गद्दी भी मिल जायगी अथवा सचमुच के राजा भी आपके कुछ गनें गूँथेंगे, हाँ मन मे समझे रहिए कि हम भी कुछ हैं पर उपाधि की रक्षा के लिए कपड़ा लत्ता चेहरा मोहरा सवारी शिकारी हुजूर की खातिर दारी आदि में घर के धान पयार मिलाने पड़ेगे अपने धर्म कर्म देश जाति आदि मे फिरट रहना पड़ेगा क्योंकि अब तो आपके पीछे उपाधि लग गई न, इसमे कहते हैं कि उपाधि का नाम बुरा है। उपाधि पाना अच्छा है सही पर ऐसा ही अच्छा है जैसा वैकुंठ जाना पर गधे पर चढकर।"

मिश्र जी की शैली की स्वच्छदता, हास्यविनोदप्रियता, आत्मीयता, ग्रामीणता, रोचकता, सजीवता, शैथिल्य एव भद्दापन प्रधान विशेषताएँ हैं। उन्होने वैसवारे की कहावतों का तथा साधारण प्रचलित मुहावरो का भी प्रयोग अधिक किया है। 'ऑप-सॉप', 'बात-बतगड', 'रोग-दोख', 'झपकी-फुँदनी', 'चेहरा-मोहरा' के सदृश शब्द युग्मों का भी प्रयोग अधिक मिलता है।

इन लेखकद्वय के उपरात प० बदरीनारायण चौधरी का नाम भी स्मरणीय है। ये 'आनद कादबिनी' नामक पत्रिका के सपादक थे। इस पत्रिका के 'कादबिनी' (मेघमाला) नाम पर तदतर्गत भिन्न भिन्न शीर्षकों मे साग रूपक की कल्पना की गई है यथा 'सम्पादकीय सम्मति समीर', 'हास्यहरिताकुर', 'वृत्तातबलाकावलि', 'काव्यामृतवर्षा, 'विज्ञापन वीर बहूटियाँ' आदि। इस पत्रिका मे कभी कभी तो आद्योपात इन्हीं को लिखना पड़ता था—कदाचित् लेखक ही न मिलते थे। दूसरे चौधरी जी अपने समान किसी को 'लिक्खाड' नहीं समझते थे। प्रथम तो इन्होने निबध लिखे ही कम, उनमें भी कुछ साहित्यिक कोटि में नहीं आते। फिर भी "हमारी मसहरी" 'फाल्गुन' 'मित्र' 'ऋतु वर्णन' 'परिपूर्ण पावस' आदि कई अच्छे अच्छे निबध निकले थे। आपने कुछ आलोचनात्मक लेख भी लिखे थे किन्तु वे विशुद्ध निबध

नहीं कहे जा सकते हैं। मिश्र जी या भट्ट जी के समान इनके निबंधों का कोई संग्रह भी नहीं प्रकाशित हुआ है, वास्तव मे इनकी प्रसिद्धि नाटक तथा पद्यात्मक गद्य लिखने के ही कारण है। यहाँ 'हमारी मसहरी' मे प्रारंभिक अनुच्छेद दिया जाता है, जिसमे यह स्पष्ट है कि जो कुछ 'प्रेमघन' जी ने लिखा वह मौलिक तथा व्यक्तित्व को लिए हुए है, यह बात दूसरी है कि लिखा ही कम है।

"हमारी मसहरी कलियुग की तपोभूमि है जहाँ मसा और मक्षिका राक्षसियाँ बाहर ही सिर पीटती रह जाती हैं और हमारे भावनाओं के वृहत् हाट मे वा ध्यान के प्रशात लोक मे कुछ भी बाधा नहीं पहुँचा सकतीं, अथवा यह कृत्रिम हालैण्ड की भूमि सी है जिस के बाहर ही मसा-मक्षिका-समूह-समुद्र की घनी लहरे इसके आवरण बाँध मे टकराती हुई विचित्र सुहावने शब्दों को सुनातीं पर मजाल नही कि उनकी मौजे भीतर प्रवेश पा सके, वा यह मानव-शरीर का द्वितीय पिजर या कवच है, वा चचल मन के एकाग्र करने का एक विचित्र योगयत्न है; वा इस अशात लोक मे एक कृत्रिम शातस्थली है जिसमे भक्त मकरा चारों ओर से जालों की चद्दरे तान स्वस्थ मन बीच मे बैठा मसा मक्षिका रूपी माया से कहता है कि न तू मेरे जाल मे फँस और न मैं तेरे जाल मे फँसूँ ... ।

चौधरी जी की भाषा बड़ी आडबर पूर्ण है, वे एक प्रकार से पाडित्य प्रदर्शन को ही लिखना समझते थे, इसीलिए उनकी शैली मे बड़ी कृत्रिमता है। लबे लबे वाक्य, अनुप्रास यमक और श्लेष मे पडित जी की रुचि विशेष रहती है। उनका विचार अवश्य यही था कि एक व्यावहारिक भाषा को ही लेखक को अपनाना ठीक है परन्तु स्वय अपने निबधो मे प्रेम-घन जी ने अपने उस विचार की उपेक्षा की है।

इसी आनदकादंबिनी मे जो अन्य लेखक यदा कदा मिल जाते

हैं उनमे से हरिश्चद्र शर्मोपाध्याय तथा प० नर्मदेश्वर प्रसाद उपाध्याय प्रमुख हैं। इनके दोचार लेख तो बहुत ही सुदर हैं। इन दोनों सज्जनो मे पारस्परिक मैत्रीभाव भी विशेष है। प० नर्मदेश्वर प्रसाद जी प्रयाग के गण्य-मान्य वकील हैं। आप जार्जटाउन मे रहते हैं। आपने अपने मित्र हरिश्चद्र शर्मा के लेखों को 'साहित्य हृदय' नाम से प्रकाशित करवाया है उक्त पुस्तक म १८ सुन्दर एव सुरुचि सपन्न लेख हैं जिनमे से कुछ तो उत्तम कोटि के निबधों मे स्थान पाने के अधिकारी हैं। यथा मित्र, कविता, विवाह, सतोष, आनद, लखनऊ, फाल्गुन। उक्त शर्मा जी द्वारा लिखित कुछ और भी निबध है जो 'आनद कादबिनी पत्रिका' मे तो निकले परन्तु अन्यत्र कदाचित् प्रकाश मे न आ सके हैं। यथा 'हमारी दिनचर्या 'क्षमा' 'जन्मभूमि' आदि।

'हमारी दिनचर्या' का थाड़ा सा भाग उदाहरणवत् दिया जाय।

"सकल लोक को तुल्य निवास देने वाली, बादशाह वा योगी, धनी वा दरिद्र, दुखी वा सुखी, स्वच्छद वा पराधीन, सबों को अपने अपने रूप को विस्मृत कराने वाली, प्रलय का द्वितीय दृश्य सा दिखाने वाली, उस सर्व साक्षी सर्वचेता, केवल निर्गुण स्वरूप आत्मा के वैभव को प्रकट करने वालो, चिन्ता चूर्णित मनुष्य से दूर भागने वाली, मही पतियों मे क्रीड़ा करने वाली, कृषकों तथा मजदूरों को गले मे लिपटाकर सोने वाली, आँख उलझने पर प्रेमियों के पलकरूपो गृह को त्याग अनत बसने वाली, व्याधि पीड़ित मनुष्यों को दूर ही दूर से खड़ी ललचाने वाली निद्रा का हम उस समय त्याग करते हैं जिसे ऊषा वा सतयुग का समय वा ब्राह्ममुहूर्त कहते हैं।"

इन लेखकों के अतिरिक्त भारतेन्दु के समकालीन, उनके प्रभाव मे आने वाले या उनके कुछ आगे पीछे लिखने वालों मे से फ्रेडरिक पिकाट, ला० श्री निवासदास, ठाकुर जगमोहन सिंह, प० गोविन्द नारायण मिश्र, प० किशोरी लाल गोस्वामी, तोताराम, प० भीमसेन

शर्मा, प० अंबिकादत्त व्यास तथा काशीनाथ खत्री आदि के कुछ नाम उल्लेखनीय हैं; किन्तु इसलिए नहीं कि उन्होंने निबंध रचनाएँ विशेष का या कोई विशेष शैलियों के आधार पर लेख लिखे, प्रत्युत इसलिए कि इन लेखकों के समय में हिन्दी-गद्य प्रायः अपनी शैशवावस्था में ही था अतः जो कुछ भी इन्होंने उलटा सीधा लिखा वही बहुत है—उसीसे गद्य साहित्य की—निबंध साहित्य की नहीं—श्री वृद्धि तथा उन्नति हुई। किसी ने किसी सामयिक पत्रिका में किसी साधारण सी वस्तु या प्रश्न को लेकर अथवा किसी सामयिक या देश दशा संबंधी घटना पर एक दो लेख लिख लिए। बस, इससे अधिक इनका कोई महत्व न था। इनमें से राधाचरण गोस्वामी का, आर्य शब्द का उपपादन या अंबिकादत्त व्यास का 'स्वर्ग सभा में नारद जी', 'ग्रामवास और नगर वास' तथा 'धैर्य' अथवा प० दुर्गा प्रसाद का 'परलोकतत्व', ठाकुर जगमोहनसिंह का 'श्मामा स्वप्न' बालमुकुन्द गुप्त का, 'शिवशंभु का चिट्ठा' आदि जो भी दो चार लेख यत्र तत्र संगृहीत देखने को मिलते हैं, वे साधारण गद्य लेख ही ठहरेंगे, निबंध नहीं।

हाँ, इन लोगों की कृतियों से हिन्दी गद्य का मार्ग अवश्य प्रशस्त हो गया और आगे बनने वाले निबंध प्रासाद के लिए क्षेत्र प्रस्तुत होकर उसकी नींव रखने का भी समुचित आयोजन हो गया।

पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी

निबध साहित्य के दूसरे युग के जन्मदाता हैं प० महावीर प्रसाद द्विवेदी जिन्होंने बेकन के अँग्रेजी निबधो का अनुवाद 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से किया, उसी काल के आस पास चिपलूणकर के मराठी निबधो का अनुवाद प० गगा प्रसाद अग्निहोत्री ने "निबध मालादर्श" के नाम से किया। इन दोनों पुस्तको ने एक प्रकार से निबध साहित्य के मार्ग का उद्घाटन किया किन्तु यह जान कर खेद होता है कि इस युग मे द्विवेदी जी, प० माधव प्रसाद मिश्र, बा० बालमुकुद गुप्त, प० गोविन्द नारायण मिश्र, प० चद्रधर शर्मा गुलेरी तथा बा० गोपालराम के अतिरिक्त कोई अच्छे क्या साधारण लेखक भी न हुए। इन लेखको के भी अनेक लेख "बातों के सग्रह" के ही रूप म थे, "लेखक के अतः प्रयास से निकली विचारधारा के रूप म नही।

हरिश्चद्र कालीन भाषा की कृत्रिमता और आडबर इस युग मे बहुत कुछ कम हो गया, निबध की बड़ी बड़ी भूमिकाये बाँधना भी लोगो ने बहुत कुछ छोड़ीं और भावात्मक निबधो की अपेक्षा विचारात्मक लेखों का आधिक्य हुआ। भाषा मे कुछ स्थिरता और शुद्धता भी आई, जिसका कारण था श्री द्विवेदी जी का भाषा को व्याकरण सम्मत बनाने का अनवरत प्रयास। निबधों का विषय भी परिवर्तित हुआ और उसका क्षेत्रविस्तार भी हुआ।

द्विवेदी जी भी भारतेन्दु के ही सदृश एक युग के प्रवर्तक थे। हिन्दी कविता की भाषा और विचारावली के बदलने मे, गद्य की अस्थिरता, अव्यावहारिकता तथा शिथिलता मिटाकर उसे विरामादि चिह्नों द्वारा सुबोध एवं शुद्ध बनाकर तथा उसकी एक रूपता के लिये सतत प्रयत्न करके उसे प्रत्येक भाव के एव विचार के व्यक्त करने के उपयुक्त

बनाने मे प० महावीर प्रसाद जी का कार्य सराहनीय है। किन्तु साथ ही साथ जहाँ एक ओर उन्होंने स्वय लिखा वहाँ अपने प्रभाव से अनेक लेखक भी उत्पन्न किए। इस प्रकार उनके कारण भिन्न भिन्न विषयों के सैकड़ो लेख हिन्दी साहित्य को मिले। द्विवेदी जी ने ये लेख इस उद्देश्य से लिखे थे कि अँग्रेजी, बगाली, मराठी, गुजराती आदि कई भाषाओं की अच्छी अच्छी एव जानने योग्य बातो का हिन्दी वालो को भी ज्ञान हो जाय, अतः कभी कभी उन्होने सामयिक पत्र पत्रिकाओं के ही किसी लेख को अथवा किसी विद्वान् की किसी पुस्तक के एक दो अध्यायों का अनुवाद या भावानुवाद करके ही 'सरस्वती' मे प्रकाशित कर दिया—इसीलिए उनके लेख भावोद्रेक या रसानुभूति नहीं कराते, प्रत्युत केवल भिन्न भिन्न विषयो के ज्ञान का परिचयमात्र कराते से प्रतीत होते हैं। उपर्युक्त कथन की पुष्टि के लिये हम उनके निबधों के प्रारभ करने के दो चार ढगो को देख सकते हैं, जिनका उन्होंने प्रायः प्रयोग किया है।

"राव बहादुर चितामणि वैद्य सस्कृत भाषा के अच्छे ज्ञाता हैं। पुरानी बातों के अनुसंधान मे आपका जी खूब लगता है। नये नये रहस्यों के उद्घाटन मे आप बड़े पटु हैं। आप की राय है कि कालिदास ईसवी सन् के पहले विद्यमान् थे।"

"कालिदास का स्थितिकाल—"

इसी प्रकार "आर्यों की जन्मभूमि" का प्रारभ इस प्रकार होता है :—

"पूने में नारायण भवानराव पावगी एक सज्जन हैं। आप पहले कहीं 'सबजज' थे। आप बड़े महत्वाकाक्षी, बड़े विद्याव्यसनी और मराठी भाषा के बड़े नामी लेखक हैं।... .....आप एक बहुत बड़ा ग्रंथ मराठी मे लिख रहे हैं। उसका नाम है—भारतीय साम्राज्य।"

"पूने के नारायण भवान राव पावगी महाशय बड़े पडित हैं।

प्राचीन भारत के विषय मे आपने कई पुस्तकें मराठी और अँग्रेजी भाषा मे लिख डाली हैं.,.... . उन्होने इसे (सोमरस के विषय मे फैले हुए प्रवाद को) ग़लत समझा और एक छोटी सी पुस्तक अँग्रेजी भाषा मे लिखकर लोगो की गलती उनके गले उतार देने का परिश्रम उठाया। अपनी पुस्तक मे आपने लिखा है कि सोमरस सुरा हरगिज नही।"

ऊपर कही हुई बात के समर्थन के अतिरिक्त एक बात इन उद्धरणों मे और भी स्पष्ट है कि द्विवेदी जी मौलिकता का दंभ नहीं करते थे। जहाँ से जो कुछ सामग्री लेते थे उसका स्पष्ट निर्देश कर देते थे। आजकल क कुछ अपरिपक्व लेखकों के समान यह नहीं कि यहाँ वहाँ से सामग्री उड़ा ली, जोड़ गाँठ कर कुछ हेर फेर मे रख दी, बस 'मौलिकता' का समावेश हो गया, फिर मूल लेखक के प्रति कृतज्ञता प्रकाशन की क्या आवश्यकता है। किन्तु पण्डित महावीर प्रसाद जी इस प्रकृति के नितात विरोधी थे, अनेक लेख तो वे इस प्रकार प्रारभ करते हैं :—

"इलस्ट्रेटेड टाइम्स आफ इण्डिया मे इस विषय पर एक अच्छा लेख निकाला है। उसमे लिखा है कि... . ..."

"सोमनाथ के सबंध मे गुजरात के गजेटियर के आधार पर कुछ ऐतिहासिक बातें हमे इस नोट मे लिखनी हैं। गजेटियर मे इस मदिर का पुराना इतिहास बड़ी खोज से लिखा गया है।"

लेखों के बीच बीच मे भी वे अपनी सामग्री या कथन के मूलाधार को बताते चलते हैं। "पूने मे सर राम कृष्ण भडारकर की सस्थापित जो गवेषणा समिति है उसके जर्नल की दूसरी जिल्द के पहले खण्ड मे वैद्य महोदय का वह लेख निकला है । उसका आशय सुनिये—"

पडित जी ने लेखापहरण का विरोध करने का बीड़ा ही उठाया था। अनेक लेखकों के दूसरों के लेख या भाव ज्यों के त्यों ले लेने पर उन्होंने आजन्म कटु समालोचना की, फिर भला वे स्वय इस प्रकार

के चौर्य के अपराधी क्यों बनते ।

द्विवेदी जी के लेखों की साधारण परिस्थिति के दिग्दर्शन के उपरात यदि हम उनकी सख्या पर विचार करें तो हमें इनके लेखो की सख्या इनके निकट पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी लेखको के लेखों से अधिक मिलती है। प्रकाशित भी लगभग सभी हुए हैं। ये लेख मुख्यतः सग्रह ग्रथों मे निकले हैं, यो तो दो चार और भी हैं :—

"साहित्य सीकर" 'साहित्य संदर्भ" "समालोचना समुच्चय" "विचार विमर्श" "रसज्ञरजन" "लेखाजलि" और "आलोचनाजलि"। इनमे कतिपय लेख दो दो। (कभी तीन तीन तक) सग्रहों मे आगये हैं। इनकी सख्या लगभग २५० है, किन्तु जैसा अन्यत्र भी कहा गया है अधिकांश लेख एक एक दो दो पृष्ठों के ही हैं, जिनसे साधारण साधारण बातो का परिचय कराया गया है। ऐसे कुछ लेखों के नाम दे देना अनुचित न होगा।

"पुस्तकों का समर्पण", "किराये पर कवि", "पुरातत्वविभाग" 'हजार वर्ष के पुराने खडहर', 'तिब्बती भाषा मे एक प्राचीन सस्कृत ग्रथ', 'महेन्द्रगिरि के मदिर' 'कुमार पाल चरित', 'वैदिक कोष' 'डा० सतीशचन्द्र बनर्जी', 'पेड़ पौधों मे चेतना शक्ति' 'रोगपरीक्षा-यत्र', 'सरकारी वजीफे', 'देशभक्ति की बात', 'देहात मे बीमारी', 'उदारता मे उफान', 'निःशब्द समर', 'जापान मे पतगबाजी' आदि।

यहाँ पर 'पुस्तको का समर्पण नामक लेख (निबध उसे नही कह सकते) इसलिये दिया जाता है जिससे यह पता चल जाय कि द्विवेदी जी के अधिक लेख ऐसे ही हैं—अतः ये निबध-कोटि मे नही रखे जा सकते।

"कुछ समय से हिन्दी पुस्तको के कोई कोई लेखक, अनुवादक और प्रकाशक पुस्तक समर्पण के सबध मे एक अनुचित और अन्याय पूर्ण काम कर रहे हैं। रद्दी से रद्दी पुस्तक तक का समर्पण किसी के

नाम पर कर देना वे बहुत ज़रूरी समझने लगे हैं। उनके काम का यह पहला अनौचित्य है। जिस पुस्तक का कुछ भी महत्व नहीं, जिससे कुछ भी लाभ की संभावना नहीं उसके समर्पण की क्या आवश्यकता– भेंट मे किसी को वही चीज़ दी जानी चाहिए जो अच्छी हो, बुरी चीज़ किसी को देना उसका अपमान करना है। फिर औरों की रची हुई दो दो चार चार सौ वर्ष की पुरानी पुस्तकों का समर्पण करने का अधिकार प्रकाशक को कहाँ प्राप्त हुआ। दूसरे की चीज़ का समर्पण करने वाले वे कौन हैं? उनके समर्पण कार्य का दूसरा अनौचित्य है कि जिनको वे पुस्तक समर्पण कर रहे हैं, उनसे ऐसा करने की अनुमति लेने तक की वे शिष्टता नहीं दिखाते। पुस्तक छापी और समर्पण-पत्र लगाकर भेज दी। बहुत हुआ तो एक चिट्ठी लिख दी कि बिना पूछे ही मैने समर्पण कर दिया है! क्षमा कीजिये!! तीसरा अनौचित्य यह है कि कोई शिष्ट शिरोमणि जिसे पुस्तक समर्पण करते हैं उसी को उसकी समालोचना करने की आज्ञा भी दे देते हैं!!! इस अशिष्टता और अनाचार का कुछ ठिकाना है!! अब तक इन पक्तियो के तुच्छ लेखक के नाम पर इसी तरह की कई पुस्तकों का समर्पण हो चुका है। प्रार्थना है कि अब इस पर और अन्याय न किया जाय। वह अपने को समर्पण का पात्र ही नहीं समझता।"

अतिम वाक्य मे यद्यपि आत्मकथा है किन्तु इसे निबध न कह कर साधारण सा विचार या सूचना की बात ही कहना अधिक सगत होगा।

यही बात 'विचार विमर्श' नामक सग्रह मे जिस आधार पर लेखों का वर्गीकरण किया गया है, उससे भी स्पष्ट होती है। इस मे आठ खण्ठों मे द्विवेदी जी के १८१ लेख सगृहीत हैं। उन आठ खण्डो के नाम ये हैं:—

साहित्य खड, पुरातत्व खंड, पुस्तकपरिचय खड, चरितचर्चा खंड।

विज्ञान खड, आलोचना खड, विवेचना खड और प्रकीर्ण खण्ड।

उपर्युक्त समस्त विवेचना मे द्विवेदी जी के एकतत्त्वीय महत्व से ही हम परिचित होते हैं। यह भी हो सकता है कि इतने मे उनके विषय मे यह धारणा बन जाय कि उन्होंने गभीर या प्रौढ लेख लिखे नही। यह बात नहीं है, उन्होंने अच्छे निबध भी लिखे हैं किन्तु अत्यल्प सख्या मे। 'रसज्ञरजन' मे जा नौ लेख सगृहीत हैं वे पर्याप्त मात्रा मे सुरुचिपूर्ण, साहित्यिक एव सुन्दर हैं।

"एक एक सीधी बात कुछ हेर फेर-कहीं कहीं केवल शब्दों के ही—के साथ पाँच छः तरह से पाँच छः वाक्यों म कही हुई मिलती है। उनकी यही प्रवृत्ति उनकी गद्य शैली निर्धारित करती है।" उनके लेखों मे छोटे छोटे वाक्यो का प्रयाग अधिक मिलता है।

विनोद और मनोरंजन की मात्रा जिन निबधों मे प्रधान है उनकी भाषा सरल एव व्यावहारिक है उनमे व्यग्य के छींटे भी मिलते हैं और भिन्न भिन्न भाषाओं के प्रचलित शब्दों को निःसकोच ग्रहण भी किया गया है। भाषा शुद्ध एव व्याकरण-सम्मत तो है ही। कुछ मुहावरे भी यथास्थान प्रयुक्त हुए हैं। इसके विपरीत गंभीर एव चिंतनसापेक्ष विषयों पर लेखनी चलाते समय सस्कृत तत्सम शब्दों की सख्या भाषा मे बढ जाती है और एक ही बात की व्याख्या के रूप मे उसके आगे के कुछ वाक्य लिखे जान पड़ते हैं।

— —

द्विवेदी-काल के अन्य लेखक

द्विवेदी जी के बाद प० माधव प्रसाद मिश्र एक अच्छे निबधकार कहे जा सकते हैं। इन्होंने "सुदर्शन" नामक एक पत्र निकाला था जो सवा दो वर्ष चलकर बद हो गया। इसमे कभी-कभी जोश मे आकर यह बड़े ही गभीर एव शक्तिशाली लेख लिखते थे। अनेक लेख सनातनधर्म के प्रतिपादन एव उनके विरोधियो तथा विपक्षियों के खण्डन मे लिखे गए थे। "इसके अतिरिक्त पाश्चात्य सस्कृताभ्यासी विद्वान् जो कुछ कच्चा पक्का मत यहाँ के वेद, पुराण, साहित्य, आदि के सबध मे प्रकट किया करते थे, वे इन्हे खल जाते थे और उनका विरोध ये डटकर करते थे। उस विरोध मे तर्क आवेश और भावुकता सब का एक अद्भुत मिश्रण रहता था। 'वेत्रकाभ्रम' इसी झोंक मे लिखा गया था।..... 'सुदर्शन' मे इनके लेख प्रायः सब विषयो पर निकलते थे जैसे पर्व त्योहार, उत्सव, तीर्थस्थान, यात्रा, राजनीति इत्यादि।"

स्व० मिश्रजी के सब प्रकार के लेख इण्डियन प्रेस से प्रकाशित 'माधव मिश्र निबधमाला' मे सगृहीत हैं। प० महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'विचार विमर्श' के समान इस पुस्तक मे मिश्र जी के लेखो को भी आठ खण्डों मे वर्गीकृत करके रखा गया है। उनके नामों से यह स्पष्ट पता चलता है कि मिश्रजी की प्रतिभा बहुमुखी थी और वे प्रायः किसी भी प्रकार के विषय पर लेखनी चला सकते थे। वे आठ खण्ड ये हैं :—

जीवन चरित्र, पुरातत्व, पर्व या त्योहार, साहित्य, राजनीति, स्थान वर्णन और भ्रमण वृत्तात, धर्म-चर्चा और आन्दोलन, तथा कहानियाँ।

कुछ लेखो के नाम विषय को और भी स्पष्ट कर देगे। जैसे राम-लीला, व्यास पूर्णिमा, हिन्दी भाषा, काव्यालोचना, स्वदेशी, आन्दोलन, अयोध्या, सिमलायात्रा, परीक्षा, धृति, क्षमा, होली, बड़ा बाजार किन्तु "लोक सामान्य स्थायी विषयो पर मिश्रजी के केवल दो लेख मिलते हैं—'धृति', 'क्षमा'।" वैसे तो 'परीक्षा' 'होली' आदि अन्य भी कतिपय लेख निबंध कोटि मे रखे जा सकते हैं। यहाँ पर परीक्षा से थोडा सा अंश उद्धृत किया जाता है।

"वह बड़भागी धन्य है जिसका कभी इस तीन अक्षर के शब्द से काम न पड़े, अपना भरम लिये मुँदी भलमंसी के साथ जीवन के दिन पूरे कर दे। परीक्षा वह चीज है, जिसके नाम से देवता और ऋषि मुनि भी काँप उठे हैं, हमारे जैसे साधारण मनुष्यों की सामर्थ्य ही कितनी है जो इसके सामने पैर जमा सकें।"

मिश्रजी का प्रस्तुत अवतरण हमे सहसा प० प्रताप नारायण मिश्र की शैली की स्मरण करा देता है।

मिश्र जी के ही समकालीन गहमर निवासी बा० गोपालराम जी भी कुछ साधारण निबंध या लेख सामयिक पत्र पत्रिकाओ मे लिख दिया करते थे। उनके निबंधों के विषय मे प० रामचन्द्र जी शुक्ल का कथन है "विलक्षण रूप खड़ा करना उनके निबंधों की विशेषता है। किसी अनुभूत बात का चरम दृश्य दिखाने वाले ऐसे विलक्षण और कुतूहल जनक चित्रों के बीच से वे पाठक को ले चलते हैं कि उसे एक तमाशा देखने का सा आनंद आता है।" 'ऋद्धि और सिद्धि' के समान उनके दो एक लेख यद्यपि अच्छे बन पड़े हैं, किन्तु उनका प्रधान क्षेत्र निबंध-रचना न होकर उपन्यास लिखना था अतः अब एक अच्छे निबंध लेखक बा० बालमुकुंद गुप्त का वर्णन किया जायगा।

गुप्त जी हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं के अच्छे लेखक थे। पहले वे उर्दू के दो पत्रों का संपादन करते थे, बाद मे भारतमित्र के

सपादक हो गये । अतः उनके लेखो और निबधो की भाषा बडी प्रवाह-मयी, मुहावरेदार तथा व्यावहारिक होती थी । विनोद की मात्रा गुप्त जी के अधिकाश लेखो मे रहती थी । 'शिव शभु का चिट्ठा' तो प्रसिद्ध ही है । इन्होंने प० महावीर प्रसाद द्विवेदी के विरुद्ध 'आत्माराम के नाम से कुछ व्यग्यपूर्ण लेख लिखे थे । "राष्ट्र निर्माण और साहित्य" नामक लेख भी अच्छा बन पडा है । इनके निबधों का सग्रह 'गुप्त निबधावली' के नाम से प्रकाशित हुआ है ।

प० गोविन्द नारायण मिश्र का उल्लेख पहले भी हो चुका है, किन्तु उनकी वास्तविक शैली एव महत्व गुप्त जी के रचना-काल के ही आस पास प्रस्फुटित होते हैं । ये अपनी अनुप्रासप्रियता, सस्कृत के तत्सम शब्दों का बाहुल्य तथा काव्यमयी कल्पनाओं के लिए ही अधिक प्रसिद्ध हैं—कदाचित् इसी अभिरुचि के कारण मिश्र जी ने बाणकृत 'कादम्बरी' की शैली पर एक पुस्तक ही हिन्दी गद्य मे लिखने की सोची, उसका श्री गणेश "कवि और चित्रकार" के नाम से हो गया था किन्तु वह अपूर्ण ही रहा ।

इनके निबधों का एक सग्रह "गोविद निबंधावली" के नाम से प्रकाशित हुआ है । उसमे उपरि निर्दिष्ट 'कवि और चित्रकार' भी वैसा अपूर्ण ही सगृहीत है तथा स्वय सारस्वत ब्राह्मण होने के कारण सारस्वत ब्राह्मणो का एक लंबा चौड़ा सा विवरण भी है, जो प्रायः एक छोटी सी पुस्तक ही कही जा सकती है । इन दो लेखों के अतिरिक्त दो बड़े लबे लबे लेख 'प्राकृत विचार' तथा 'विभक्ति विचार' नाम से हैं । यह भी लेख तो क्या छोटी-मोटी पुस्तके ही हैं । उनका प्रारभ तथा अत पुस्तक के समान है । (दूसरे लेख मे तो 'परिशिष्ट' तक दिया गया है) । इनके अतिरिक्त द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन मे दिया हुआ भाषण तथा 'आत्माराम की टें टें'—ये दो लेख और हैं । दूसरा तो बा० बालमुकुद गुप्त के 'आत्माराम' का उत्तर है, जिसमे द्विवेदी जी

का पक्षसमर्थन कर गुप्त जी को खोटी खरी सुनाने का प्रयत्न है।

इन लेखों की सूची से ही यह स्पष्ट है कि यह अच्छे निबध नहीं कहे जा सकते हैं, हाँ अपने प्रगाढ पाण्डित्य, गभीर अध्ययन एवं एक पत्थर तोड़ शैली के लिये वे अवश्य चिरस्मरणीय रहेगे। सस्कृत के प्रसिद्ध लेखक वाण और दण्डी के समान इनकी शैली भी काव्य और अलकार की छटा दिखाने वाली लबे-लबे समासो से युक्त शैली है। सस्कृत के तत्सम शब्द ही नहीं, ब्रजभाषा के भी अनेक शब्द रहते हैं। किसी किसी निबध मे अपेक्षातर सरल शैली का भी प्रयोग हुआ है। इस कृत्रिम एवं आडबर पूर्ण भाषा के कारण भावों की जटिलता और दुरूहता इनकी रचना मे अधिक आ गई है। मिश्र जी व्यर्थ मे ही संस्कृत शब्दों का पुछल्ला बढ़ा देते हैं—यथा समुचित, समुत्पन्न, प्रपी-ड़ित, सुकठिन आदि, तथा सुकरता, समोपता, ऋजुता को सौकर्य, सामीप्य, आर्जव लिखना उन्हें अधिक प्रिय था। मिश्री जी के निबध विचार-प्रधान ही कहे जायँगे।

द्विवेदी-युग के शेष लेखक

मिश्र जी के समकालीन ही बा० श्मामसुदरदास तथा पण्डित अयोध्यासिह उपाध्याय के नाम भी उल्लेखनीय हैं। उपाध्याय जी ने निबधों की कोई विशेष रचना नहीं की, केवल 'प्रिय प्रवास' और 'रस कलश' की भूमिकाएँ तथा किसी सामयिक पत्रिका मे लिखा हुआ कभी आध कोई लेख ही इनकी गद्य-रचना या निबंध-रचना के अतर्गत लिये जा सकते हैं। उपाध्याय जी प्रधानतया "हरिऔध" हैं, अतः उनके गद्य मे भी कवित्व, कल्पनाएँ एव शब्दजाल अधिक मिलता है। इस दृष्टि से अयोध्यासिह जी प० गोविन्द नारायण के अधिक निकट हैं, परन्तु बा० श्यामसुदरदास जी के साथ बात कुछ भिन्न है। उन्होंने स्वयं भी कई अच्छे अच्छे लेख लिखे और दूसरो को भी लिखने के लिये प्रेरित किया। किन्तु इससे भी बड़ा जो उनका कार्य है, वह है निबधों का सपादन। हिन्दी निबधमाला दो भाग, तथा गद्य रत्नावली मे लगभग ३० बहुत अच्छे निबध हैं। इन सग्रहो से एंट्रेंस, एफ. ए. बी. ए. की परीक्षाओं मे हिन्दी गद्य से, विशेषतः निबध साहित्य से, विद्यार्थियों को परिचित कराने का काम चलता है, उक्त सग्रहों मे ही आपके अपने भी दो तीन बड़े सुन्दर लेख हैं। स्वय रचित पुस्तकों मे से 'भाषा विज्ञान' 'साहित्यालोचन' 'हिन्दी भाषा और साहित्य'—इन तीन पुस्तकों के द्वारा श्याम सुदर दास जी ने हिन्दी मे इन अगों के अभाव की पूर्ति की, और यह एक उनका अमर कार्य है।

उक्त बाबू साहब की शैली शुद्ध भाषा के लिये प्रसिद्ध है। वे उर्दू अँग्रेजी के शब्दों को नियमित रूप से बचाने का ध्यान रखते हैं फिर भी शैली विशेष दुर्बोध नहीं होती, हाँ जहाँ नवीन विषयों का प्रतिपादन हुआ है वहाँ स्वभावतः कुछ रूक्षता तथा गभीरता आ गई है।

'उनकी शैली मे प्रयत्न की मात्रा अधिक है।'

तदनतर प० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का नाम भी हिन्दी-निबध के क्रमिक इतिहास म एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। श्री गुलेरी जी के निबध अधिक नहीं मिलते हैं, किन्तु जो लेख प्राप्त हैं, वे नितात प्रौढ, परिमार्जित एवं पूर्णतया साहित्यिक कोटि क हैं। शर्मा जी 'समालोचक' नामक एक पत्र के सपादक भी थे। "उक्त पत्र द्वारा गुलेरी जी एक बहुत ही अनूठी शैली लेकर साहित्य क्षेत्र मे उतरे थे। ऐसा गभीर पाडित्य पूर्ण हास, जैसा इनके लेखो मे रहता था, और कहीं देखने मे न आया।" 'कछुआधरम' 'मारेसि मोंहि कुठाऊँ' नामक दो निबध तो बड़े ही प्रसिद्ध हैं और गुलेरी जी के निबधों के उदाहरण के रूप मे दिये जाते हैं। 'सगीत' भी एक अच्छा निबध है। इस प्रकार के सामाजिक तथा आलोचनात्मक लेखों के अतिरिक्त गुलेरी जी ने साहित्यिक एव ऐतिहासिक लेख भी लिखे हैं। इनके अधिकाश लेखों में इनका व्यक्तित्व इतना स्पष्ट झलकता है, कि हम इन्हे भी एक उत्कृष्ट कोटि का निबधकार कह सकते हैं। क्या भाषा की दृष्टि से, क्या भाव की दृष्टि से, क्या आत्मीयता के नाते, क्या व्यक्तित्व के नाते प० चद्रधर शर्मा गुलेरी अपने समकालीन सभी निबंध लेखकों से उच्चतर आसन पर आसीन थे। उनके 'कछुआधरम' से उदाहरण दिया जाता है।

"किसी बात का टोटा होने पर उसे पूरा करने की इच्छा होती है, दुख होने पर उसे मिटाना चाहते हैं। यह स्वभाव है। ससार मे त्रिविध दुःख दिखाई पड़ने लगे। उन्हे मिटाने के लिये उपाय भी किये जाने लगे। 'दृष्ट' उपाय हुए। उनसे सतोष न हुआ तो सुने सुनाये (आनुश्रविक) उपाय किये। उनसे भी मन न भरा। साख्यो ने काठ कडी गिन गिन कर उपाय निकाला, बुद्ध ने योग मे पक कर उपाय खोजा। किसी न किसी तरह कोई उपाय मिलता गया। कछुओं ने सोचा, चोर को क्या मारे, चोर की माँ को ही न मारे। न रहे

बाँस न बजे बाँसुरी । लगी प्रार्थनाएँ होने—

"मा देहि राम ! जननी जठरे निवासम्"

"यह बेधड़क कहा जा सकता है कि शैली की जो विशिष्टता और अर्थ-गर्भित वक्रता गुलेरीजी मे मिलती है वह और किसी लेखक मे नहीं। इनके स्मित हास की सामग्री जीवन के क्षेत्रो से ली गई है। अतः इनके लेखों का पूरा आनद उन्हीं को मिल सकता है जो बहुज्ञ या कम से कम बहुश्रुत हैं।"

गुलेरी जी के समान प्रौढ़ता तथा साहित्यिकता मे यदि कोई उनके टक्कर का था, तो वह सरदार पूर्णसिंह ही थे। यद्यपि सरदार जी ने भी अधिक नहीं लिखा, केवल पाँच छः लेख—'आचरण की सभ्यता', 'मज़दूरी और प्रेम' 'सच्ची वीरता' 'पवित्रता', 'कन्यादान' 'नयनों की गगा' आदि ही 'सरस्वती' के प्रारभिक दिनों मे निकले थे। उक्त सभी लेखों मे शब्द चयन का चमत्कार तथा प्रतिभा का परिचय तो मिलता ही है, भावव्यजना तथा भाषा की लाक्षणिकता भी अनूठी है। हाँ आत्म कथा-कथन की अभिरुचि (egoism) अवश्य पूर्ण जी मे नहीं है।

पूर्ण सिंह जी के ही समकालीन प० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी भी निबध लेखको मे अच्छा स्थान रखते हैं। पण्डित जी ने अधिकाश लेख निबधों के उदाहरण की दृष्टि मे लिखे, इसीलिये वे निबंध प्रारंभिक शिक्षावाले विद्यार्थी के चाहे जितने लाभ के हों, उनमे प्रौढ़ता एव साहित्यिकता नहीं मानी जा सकती। चतुर्वेदी जी ने स्कूल की भिन्न भिन्न कक्षाओं के लिये पाठ्य् पुस्तकों के रूप मे ही अधिक रचना की है। 'हिन्दीनिबधशिक्षा' 'प्रबधरचनाशैली' इसी प्रकार की पुस्तके हैं। कभी आध उच्च कोटि के निबध भी लिखे गए थे। किन्तु वे तभी अच्छे बन पड़ते थे जब पाठ्य् पुस्तकों की क्रमिक लेखन-परिधि के बाहर रहकर स्वतन्त्र प्रेरणा से चतुर्वेदी जी लिखते थे।

यहीं पर दूसरे चतुर्वेदी जी, कई सम्मेलनो के सभापति, प० जगन्नाथप्रसाद जी का भी नामोल्लेख सामयिक होगा। इनकी अधिकाश रचनाएँ हास्यात्मक एव विनोद और मनोरजन पूर्ण ही हैं। इनकी दूसरी विशेषता है एक व्याख्यानात्मक ढग मे कुछ लेख लिखना जो हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कई अधिवेशनों के सभापति के स्तर से पढ़े गए थे।

इनसे पूर्व जैसे प० बालकृष्ण भट्ट ने 'ल' या प० प्रताप नारायण मिश्रने 'ट' तथा 'त' शीर्षक मे ही निबध लिख डाले थे वैसे ही (कदाचित उसी अनुकरण पर) इन्होंने 'ब की बहार' दिखाई। प० जी ने 'गद्यमाला' नामक पुस्तक मे छः प्रसून गूँथे हैं, उनके नाम हैं विनय प्रार्थना, समाज, भाषा और साहित्य, वाणिज्य व्यापार, हँसी मज़ाक तथा विविध। इनमे २३ लेख हैं किन्तु प्रायः सभी साधारण कोटि के हैं। एक भाव को हृदयगम कर अन्य भावो की उत्तेजना प्रदान करने वाले, या लेखक के व्यक्तित्व से ही विशेष परिचय कराने वाले लेख कोई नहीं हैं, यों 'म' 'पिक्चर पूजा' 'बड़प्पन'—ये तीन चार लेख अच्छे हैं।

इस सामग्री के अतिरिक्त एक पुस्तक और है जिसमे चतुर्वेदी जी के पाँच लेख तथा दो भाषण सकलित हैं, इसका नाम है "निबध निचय"। नाम से पाठक यह समझ सकते हैं कि इसमे न मालूम किस उच्च कोटि के और कितने निबध हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है। सख्या ऊपर दी ही जा चुकी है, निबधों के विषय शीर्षक अथवा नाम तो हैं 'हिन्दी की वर्तमान अवस्था' 'अनुप्रास का अन्वेषण' 'हमारी शिक्षा किस भाषा मे हो' 'सिंहावलोकन' तथा 'हिन्दी लिग विचार'। किन्तु ये नाम भी एक प्रकार से भ्रम मे ही रखते हैं। वास्तव मे ये सभी पन्द्रह-पन्द्रह बीस-बीस पृष्ठ के व्याख्यानात्मक लेख हैं जो क्रमशः

द्वितीय, षष्ठ, सप्तम, अष्टम तथा नवम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन मे सभापति के पद से अथवा ऐसे ही पढ़े गए थे। अतः ये भी हमारे क्षेत्र से बाहर ही हैं। वैसे चतुर्वेदी जी के अन्य लेखो से ये लेख या भाषण साहित्यिक निबध के अधिक निकट पहुँचते हैं।

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल

हिन्दी के निबध साहित्य का दूसरा युग जो द्विवेदी जी के साथ आरम्भ हुआ था, लगभग यहीं पर समाप्त हो जाता है, तीसरा और अतिम युग का प्रवर्तन होता है श्रीयुत प० रामचन्द्र शुक्ल से। वे पश्चिम के प्रौढातिप्रौढ निबधकारों से टक्कर ले सकते हैं।। वास्तव मे हिन्दी साहित्य को शुक्ल जी के निबधा पर ही गर्व है। उन्होने करुणा, लोभ और प्रीति, क्रोध आदि के समान भावात्मक विषयों पर ऐसी सूक्ष्म दृष्टि से विवेचना करते हुए लिखा है कि यही कहते बनता है कि निबंध—विशेषतः विचारात्मक—अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है। रस्किन तथा बेकन को गभीरता तथा दार्शनिकता के कारण जो स्थान अँग्रेजी साहित्य मे प्राप्त है, हिन्दी साहित्य मे शुक्ल जी भी उसी के अधिकारो हैं। उनका सूत्ररूप मे लिखित प्रत्येक वाक्य यत्र तत्र साहित्य के प्रायः सभी क्षेत्रों मे बड़े गर्व के साथ उद्धृत किया जाता है। प्रस्तुत प्रयास मे ही न जाने कितने स्थानों पर परोक्ष एव प्रत्यक्ष रूप से उनके शब्द तथा भाव गृहीत हैं। आलोचनात्मक प्रणाली पर लिखा हुआ कदाचित् ही कोई ग्रथ या लेख लिखा जाता हो जिसमे शुक्ल जी का आधार न लिया जाता हो। उन्होने स्वय भी सूर, तुलसी तथा जायसी पर विस्तृत समालोचनाएँ लिखीं हैं इन्हे वे स्वय भी निबध ही मानते हैं, जैसा कि उनके इस कथन से व्यक्त है :—

"इस सग्रह मे भ्रमरगीत के चुने हुए पद रखे गए हैं। पाठ जहाँ तक हो सका है शुद्ध किया गया है। कठिन शब्दों और वाक्यों क अर्थ फुटनोट मे दे दिये गए हैं। सूरदास जी पर एक आलोचनात्मक निबध भी लगा दिया गया है, जिसमे उनकी विशेषताओं के अन्वेषण का कुछ प्रयत्न है।"

('वक्तव्य'— भ्रमर गीतसार मे)

शुक्ल जी का लेखसग्रह विचार वीथी, चिंतामणि एवं त्रिवेणी इन तीन नामों मे प्रकाशित हुआ है। प्रथम मे १३ निबन्ध हैं। भाव मनोविकार, उत्साह, श्रद्धा भक्ति, करुणा, लज्जा और ग्लानि, लोभ और प्रीति, घृणा, ईर्षा, भय, कविता क्या है, क्रोध, भारतेन्दु हरिश्चद्र और तुलसी का भक्तिमार्ग। चितामणि म ये तेरह निबध तो सगृहीत ही हैं, निम्नलिखित चार निबध और नये हैं :—मानस की धर्मभूमि, काव्य मे लोकमंगल की साधनावस्था, साधारणीकरण और व्यक्ति-वैचित्र्यवाद, तथा रसात्मक बोध के विविध रूप।

आलोचनात्मक लेख तो शुक्ल जी से पहले बहुत ही कम लिखे जाते थे। जो लिखे भी गये वे नितात शिथिल एवम् पल्लवस्पर्शी होते थे, वे गभीर अध्ययन के परिचायक, या कवि के सूक्ष्म विचारों से पाठक के हृदय का सामंजस्य स्थापित करने वाले नही रहते थे। अतः शुक्ल जी ने सच्ची आलोचना का बीजवपन ही नहीं किया वरन् उसे पल्लवित तथा पुष्पित तक कर दिया। इनकी संयत और विशद-विवेचना-समन्वित शैली अपनी ही है। उस पर उनके व्यक्तित्व तथा तदन्तर्गत गभीरता दोनों की स्पष्ट छाप है। यों तो उनके लेखों से सभी साहित्य प्रेमी परिचित होंगे, फिर भी उनके 'उत्साह' से थोड़ा सा भाग दिया जाता है।

"दुःख के वर्ग मे जो स्थान भय का है, आनदवर्ग मे वही स्थान उत्साह का है। भय मे हम प्रस्तुत कठिन स्थिति के निश्चय से विशेष रूप मे दुखी और कभी कभी उस स्थिति से अपने को दूर रखने के लिए प्रयत्नवान् होते हैं। उत्साह मे हम आने वाली कठिन स्थिति के भीतर साहस के अवसर के निश्चयद्वारा प्रस्तुत कर्मसुख की उमंग मे अवश्य प्रयत्नवान् होते हैं। उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढता के साथ साथ कर्म मे प्रवृत्त होने के आनद का योग रहता है। साहस-

पूर्ण आनद की उमग का नाम उत्साह है । कर्म-सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं ।

शुक्ल जी की शब्दावली सस्कृत तत्सम शब्दों से अधिकाश परिपूर्ण है । प्रचलित उर्दू शब्द, कुछ व्यावहारिक एव पारिभाषिक शब्द तथा यत्र तत्र अँग्रेजी शब्दों का भी (उनके द्वारा भावों मे प्राबल्य लाकर अधिक प्रभावोत्पादक बनाने के लिए) प्रयोग हुआ है । यह उपर्युक्त शब्दों के सगठन का अनुपात, विषय-प्रतिपादन एव भावो के अनुसार न्यूनाधिक भी होता रहता है । इसी कारण भाषा दुरूह न होकर अधिकाश स्थलो मे बोधगम्य ही रही है ।

भाषा और भाव का एक बड़ा सुन्दर तथा सुरुचिपूर्ण सामजस्य शुक्ल जी के लेखों मे हुआ है । सभी निबध गभीर चिंतन, विस्तृत अध्ययन और व्यापक अनुभव के फल हैं । उनमें विचारों को ठूँस ठूँस कर भरा गया है । किसी किसी बात को समझाने के लिए शब्दातरसे पुनरुक्ति भी मिलती है । भाषा सर्वत्र व्याकरणसम्मत तथा शुद्ध है ।

इस युग के अन्य निबध लेखकों का जो वर्णन नीचे दिया जा रहा है वे प्रायः समकालीन हैं । इस युग की परिधि वर्तमान समय क्या बिलकुल आज तक है । अभी सब लेखक लिख ही रहे हैं क्योंकि प० पद्मसिंह शर्मा, मु० प्रेमचद, तथा श्री जयशंकर प्रसाद जी को छोड़ कर सभी लेखक जीवित हैं । उनकी नवीन रचनाएँ तथा लेख आदि निकलते जा रहे हैं और आज कल की किसी भी मासिक पत्रिका मे दो एक मिल सकते हैं, अतः उनका विवेचन काल-निरपेक्ष किया जायगा । उपर्युक्त दिवंगत लेखकों की चर्चा के अनतर जीवित लेखकों का वर्णन होगा ।

स्वर्गीय लेखकों मे स्वभावतः सब से पहले हमारा ध्यान पं० पद्मसिंह शर्मा की ओर जाता है । इनके वास्तविक निबंध कम हैं, किन्तु इनकी अपनी शैली तथा समालोचना प्रणाली ऐसी सब से अलग है,

कि इनके नाम की उपेक्षा नहीं की जा सकती। 'हिन्दी उर्दू और हिन्दुस्तानी' पर लिखा गया तथा पढा गया भाषण प्रसिद्ध ही है। यह यद्यपि शुद्ध निबध कोटि मे नहीं रखा जा सकता, किन्तु लेख अच्छा है, इस कथन मे तो कोई सदेह का स्थान ही नहीं।

शर्मा जी के लेख 'सरस्वती' 'विशालभारत' 'माधुरी' 'भारतोदय' आदि सामयिक पत्रिकाओं मे निकला करते थे। उन्हीं मे से २२ लेखों का सग्रह 'पद्मराग' के नाम से निकला है। इसमे अधिकाश तो प्रसिद्ध पुरुषो को जीवनियाँ हैं, जैसे भीमसेन शर्मा, दयानद सरस्वती, मन्सूर, मौ० आज़ाद आदि। दो भाषण भी हैं जो हिन्दी साहित्य सम्मेलन के दो अधिवेशनो पर दिये गए थे। इनके अतिरिक्त दो चार साधारण लेख भी हैं। इसी प्रकार एक दूसरे लेखसग्रह का नाम है प्रबध मंजरी, परन्तु इसके दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त न हुआ।

शर्मा जी सस्कृत वाक्य विन्यास के साथ साथ अनेक अंग्रेज़ी शब्द भी प्रयुक्त करते चलते हैं। उर्दू के तो पूरे विद्वान् होने के कारण फारसी के तत्सम शब्दों की भरमार रहती है। ग्रामीण मुहावरों और शब्दों का भी प्रयोग निःसकोच हुआ है। किसी किसी निबध मे तो उर्दू के शैर और सस्कृत के श्लोक आदि इतने आ गये हैं कि साधारण विद्या-बुद्धि का मनुष्य उससे कोई लाभ ही नहीं उठा सकता। शर्मा जी की भाषा प्रायः बड़ी अनियन्त्रित एव असयत है। यत्र तत्र जहाँ भावाधिक्य है वहाँ की भाषा भी कुछ कम असयत है।"

शर्मा जी के उपरात श्री जयशकरप्रसाद जी का नाम महत्त्व पूर्ण है। किन्तु प्रसाद जी का मुख्य क्षेत्र है कविता तथा नाटक। या तो उनका लक्ष्य, उनका परिश्रम, उनका ध्यान, सब कुछ इतिहास के धुधले पृष्ठों का अध्ययन कर नाटक लिखने में लगा था, या फिर 'रहस्यवाद' के ढंग की कविता करने में। प्रसाद जी का व्यक्तित्व इन्हीं दो स्तभो पर आधारित था, अतः उनके निबध भी या तो नाटक

सबधी विचारों का प्रकाशन करते हैं, अथवा 'छायावाद' 'आदर्श-वाद' 'रहस्यवाद' आदि किसी 'वाद' के विवाद मे या प्रतिवाद मे लिखे गए हैं। उनके कतिपय निबध 'हस' 'माधुरी' आदि पत्रिकाओं मे भी निकले थे, परन्तु अब वे पुस्तकाकार होकर 'काव्य और कला तथा अन्य निबध' नाम से लीडर प्रेस प्रयाग से प्रकाशित हो चुके हैं। इन लेखो के नाम इस लिये नीचे दिये जा रहे हैं जिससे हमारे ऊपर के कथन का समर्थन भी हो सके और प्रसाद जी के निबंधों के विषय तथा विस्तार का भी अनुमान किया जा सके।

"आदर्शवाद और यथार्थवाद" "यथार्थवाद और छायावाद" "नाटको का आरभ" "नाटकों मे रस का प्रयोग" "रहस्यवाद" "रंगमच" "रस" "काव्य और कला"।

उक्त पुस्तक के प्राक्कथन के प्रथम दो वाक्य हमारे विषय से विशेष सम्बन्ध रखते हैं, अतः वे अविकल दिये जाते हैं:—

"प्रसाद जी हिन्दी के युग प्रवर्तक कवि और साहित्यस्रष्टा तो थे ही, एक असाधारण समीक्षक और दार्शनिक भी थे। बुद्ध, मौर्य और गुप्तकाल के ऐतिहासिक और साँस्कृतिक अन्वेषणो पर प्रसाद जी के निबध पाठक पढ चुके हैं।"

प्रसाद जी की भाषा एकपक्षीय है। उसमे सस्कृत की तत्सम शब्दावली इतनी रखी गई है कि साधारण पाठक के लिये दुरूह ही नहीं, शुष्क और अव्यावहारिक सी लगने लगती है। विदेशी शब्दों को तो भूलकर भी उन्होंने अपनी रचनाओं के पास फटकने नही दिया। उसमे लेखक की दार्शनिकता और उत्कृष्ट चिंतनशीलता आभासित होती है। इसीलिए वे मनोरजन की वस्तु कम हैं, शुद्ध साहित्य की अधिक। हाँ, शैली मे पूर्ण मौलिकता है और उसमे लेखक का व्यक्तित्व सन्निहित है। अत्यन्त वर्णनात्मक स्थलों मे कभी कभी कुछ सरलता भी दृष्टिगोचर हो जाती है।

श्री जयशकर प्रसाद जी के समकालीन, उसी नगर के रहने वाले और प्रसादजी के नाटकों में युगान्तर उपस्थित करने के समान ही अपने क्षेत्र — उपन्यास और कहानी — मे एक नवीन युग की स्थापना करने वाले मु ० प्रेमचन्द जी के निबधों की चर्चा भी इसी स्थल पर अधिक उपयुक्त होगी । प्रसाद जी के ही समान प्रेमचन्द जी के भी अधिक गद्य लेख नहीं हैं । इन्होने भी यद्यपि अपने मुख्य क्षेत्र से सबंध रखने वाले कुछ विचार ही प्रकट किये हैं, तथापि उनकी संख्या प्रसाद जी के निबंधो से अधिक है; और यदि केवल निबध के ही दृष्टिकोण से तुलना की जाय, तो प्रेमचद जी प्रसाद जी से श्रेष्ठ ठहरेंगे । उनके लेख स्वसपादित 'हंस' मे तो प्रमुखतया रहते ही थे, कभी कभी 'माधुरी' के सदृश किसी सामयिक पत्रिका मे भी दो-एक निबध भेज देते थे । उनके निबंधों तथा लेखों के तीन सग्रह भी निकल चुके हैं ।

पहली पुस्तक है "कुछ विचार'। इसमे ग्यारह सुन्दर निबध हैं और वे हैं

"साहित्य का उद्देश्य" "कहानी कल्प—तीन लेख," "उपन्यास," "उपन्यास का विषय" "एक भाषण" "जीवन में साहित्य का स्थान" "उर्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तानी" "राष्ट्रभाषा हिन्दी और उसकी कुछ समस्याये" "कौमी भाषा के विषय मे कुछ विचार" । इन निबधो मे यद्यपि पाश्चात्य दृष्टि कोण से निबध की परिभाषा चरितार्थ करने पर असफल प्रयत्न ही रहना पड़ेगा, तथापि आजकल 'निबध' शब्द जिस भाव या अर्थ का द्योतक है, उस दृष्टि से ये अत्यन्त उत्कृष्ट हैं ।

दूसरी पुस्तक 'कलम, तलवार और त्याग' मे २२ लेख या जीवनियाँ सकलित हैं । प्रथम सग्रह में प्रारम्भ के "दो शब्द" शीर्षक के अतर्गत प्रेमचद जी के वाक्य भी बड़े महत्वपूर्ण हैं ।

"इस भाग में साहित्य और भाषा सबंधी विचार ही एकत्रित किये गये हैं ।"

अन्य आधुनिक लेखक

मु० प्रेमचदजी के उपरान्त अब जीवित लेखको का वर्णन प्रसंगगत है उसमे पहले श्री रायकृष्णदास जी का नाम लिया जा सकता है। उनके लेख छोटे छोटे रहस्यात्मक ढग मे लिखे हुए गद्य काव्य के उदाहरण ही कहे जा सकते हैं। अतः साहित्यिक निबन्धो की दृष्टि मे उनका विशेष महत्व नहीं है। ये लेख पाँच पुस्तको मे प्रकाशित हुए हैं— साधना, सलाप, पगला, छायापथ और प्रवाल। इनमे 'साधना' अधिक प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त राय कृष्णदास के दो एक निबंध यत्र तत्र सगृहीत अवश्य मिल जाते हैं, जैसे श्यामसुन्दर दास द्वारा सपादित 'गद्य रत्नावली' मे 'बीज की बात' और हिन्दी निबध माला भाग १ मे 'धीर' ये शुद्ध तथा उत्कृष्ट निबध हैं।

तदनन्तर राय कृष्णदास जी से मिलते हुए एक भक्त कवि तथा लेखक—वियोगीहरि—का नाम आता है। वियोगी हरिजी एक बड़े ही भावुक कवि, साहित्य प्रेमी, तथा मातृभाषा के अनन्य सेवी भक्त हृदय पुरुष हैं। आपकी गद्य शैली प० गोविन्द नारायण मिश्र के 'कवि और चित्र-कार' की स्मृति दिलाती है। आपके निबधो मे हृदय का राग और भक्तों की सरसता है 'साधना' "प्रवाल" आदि के समान रहस्यात्मक ढग के गद्य काव्य की आपकी [1]तीन पुस्तके 'पगली' 'अन्तरनाद' और 'ठडे छींटे' प्रकाशित हो चुकी है, परन्तु वे लेख निबन्ध-कला को छू तक नहीं जाते। इनका लिखा हुआ 'साहित्य विहार' नाम का ११ लेखों

---

[1]इनकी 'तरंगिणी' नाम की एक पुस्तक और भी निकली है, परन्तु मुझे देखने को न मिल सकी।

का एक सग्रह और भी मिलता है। इन लेखो मे सच्चा मनोराज्य, आँख और हिन्दी कवि, साहित्यिक चद्रमा, ये दो तीन लेख किसी प्रकार निबध सज्ञा प्राप्त करते हैं। इनके अतिरिक्त लेख तो 'रगीला भाव' लिये हुये 'भक्तो के व्यग्य' आदि ही अधिक हैं।

इसी प्रकार आनन्द भिक्षु सरस्वती द्वारा लिखित एक पुस्तक 'भावना' है। इसमे चालीस लेख हैं। ये सभी यद्यपि ज्ञान वैराग्य' की ओर ले जाने वाले उपदेश पूर्ण लेख ही हैं फिर भी कुछ निबध-सज्ञा प्राप्त करते हैं यथा गर्व, क्रोध, आशा, अनुभव, कर्तव्य।

जिस प्रकार श्री वियोगी हरि जी प्रमुखतया कवि हैं, किन्तु गौणरूप से कुछ विचारों के प्रकाशनार्थ उन्होंने गद्य-लेख भी लिखे हैं, उसी प्रकार श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' भी हिन्दी के एक प्रतिभावान् एव उच्चकोटि के कवि हैं किन्तु कवि का भावुक हृदय तथा उसकी सूक्ष्म अन्वीक्षण दृष्टि उसके मन मे कुछ न कुछ विचार ऐसे उत्पन्न करते ही रहते हैं, जो प्रकट होने के लिये मार्ग खोजते हैं। उसमे यह आवश्यक नहीं कि कवि जो कुछ कहे, पद्य या कविता मे ही कहे— वह अपने विचारों को निबध का भी रूप दे सकता है। यही स्थिति श्री निराला जी की है। वे एक प्रतिभासंपन्न व्यक्ति हैं अतः जिस पर भी प्रतिभा का प्रकाश डाल देंगे वही तमतोमसे रहित होकर स्वच्छ तथा शुभ्र हो जायगा। उनके अच्छे अच्छे लेख मासिक पत्र पत्रिकाओ मे तो निकलते ही रहते हैं—कभी कविता पर, कभी नाटक पर, कभी छायावाद पर, कभी किसी अन्य विषय पर उनके ऐसे ही विचारात्मक लेखों के दो संग्रह भी प्रकाश में आ चुके हैं, 'प्रबन्ध प्रतिमा' और 'प्रबध पद्म'। दोनों ही सुष्ठु साहित्यिक निबधों से परिपूर्ण हैं। दूसरी पुस्तक के कुछ प्रमुख लेख ये हैं :—

'शून्य और शक्ति', 'रूप और नारी' 'राष्ट्र और नारी' तथा 'हमारे साहित्य का ध्येय'।

उक्त नामावली से प्रकट है कि निराला जी के निबंध साहित्यिक, दार्शनिक तथा गभीर विषयों पर ही हैं, लोक सामान्य स्थायी विषयों पर नहीं। इनमे व्यक्तित्व या आत्मकथा न होने के कारण मौन्टेन या लैम्ब की निबध कल्पना से इनका मूल्याकन नही किया जा सकता, किन्तु साधारणतया जिस व्यापक अर्थ मे निबध शब्द का प्रयोग होता चला आ रहा है, उस दृष्टि से ये उत्तम कोटि के हैं।

अब हम दो ऐसे निबध रचयिताओं का वर्णन करेंगे जिन्होंने निबध लेखन मे विशेष हस्त लाघव दिखाया है, इनमे से प्रथम नाम है महाराजकुमार डा० रघुवीर सिंह जी का और दूसरा नाम है प्रोफेसर गुलाबराय एम० ए० का। दोनों ही हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ एव असाधारण विद्वान् हैं, दोनों ही निबध की कला से अवगत हैं, तथा दोनों ही के निबध हिन्दी निबध साहित्य मे एक उच्च स्थान के अधिकारी हैं। उक्त डाक्टर साहब के निबधों की दो पुस्तकें—'सप्तद्वीप' और 'शेष स्मृतियाँ'—छप चुकी हैं। दूसरे ग्रथ मे 'ताज' 'एक स्वप्न की शेष स्मृतियाँ'; 'अवशेष' 'तीन कब्रें', 'उजड़ा स्वर्ग' ये पाच भावात्मक और कल्पना प्रधान निबंध है, और उसी शैली मे लिखी हुई 'शेष स्मृतियाँ' शीर्षक भूमिका भी है। पहली पुस्तक मे निम्नलिखित सात निबध हैं :—

'आधुनिक हिन्दी काव्य', 'वह प्रतीक्षा' 'जब बादशाह खो गया था', 'सेवा सदन से गोदान तक', 'इतिहास शास्त्र', 'शिमला से', 'भारतीय इतिहास मे राजपूतों के इतिहास का महत्व।'

इनमे से 'वह प्रतीक्षा' निबध की दृष्टि से अच्छा है और "सेवा-सदन से गोदान तक' आलोचनात्मक सामग्री के आधार पर एक अच्छा प्रबध है। तीसरा लेख—जब बादशाह खो गया था—एक कहानी है। 'ताज महल' आपकी श्रेष्ठ रचना है, जो कई पाठ्यपुस्तकों तक मे रखी गई है। आपकी शैली मे भाव और भाषा का सुन्दर

सामजस्य हुआ है।

'वह प्रतीक्षा' का थोड़ा सा अश दिया जाता है :—

"उस आनन्दमयी भावना का वह अदृष्ट किन्तु विमोहक सुदृढ आकर्षण ही प्रेम कहाता है। और इसी कारण जहाँ जहाँ सौदर्य बिखरा पड़ा होता है, आनन्द की तरगें उठती हैं और उस अनन्त परम आत्मा की प्रेममयी भावनाये उमड़ती हैं। प्रेम का वह अदृष्ट पाश निरतर उलझा जाता है, अधिकाधिक सुदृढ़ होता जाता है, और जब यह पाश दो आत्माओं मे भी देख पड़ते है तब वह सासारिक प्रेम कहाता है, किन्तु वहाँ भी सौन्दर्य आनन्द और प्रेम तीनो उलझे मिलते हैं और एक ऐसी अनबूझ पहेली पैदा कर देते हैं जिसे कवि भवभूति भी केवल यही कहकर टाल सका कि

'व्यतिषजति पदार्थानन्तरः कोपिहेतुः'

श्री गुलाबराय जी के भी निबध साहित्य एव समालोचना की दृष्टि से बड़े ऊँचे पाये के हैं। निबध मे जिस आत्मीयता एव व्यक्तित्व की आवश्यकता है वह यद्यपि आजकल के निबधकारो मे बहुत ही कम है, परन्तु प्रोफेसर साहब मे ये दोनों ही गुण प्रचुर मात्रा मे हैं। आपके २१ निबधों से समन्वित एक पुस्तक 'मेरी असफलताएँ' बड़ी ही सुदर है। एक कुशल कलाकार, अनुभवी विद्वान एवं प्रोफेसरकी लेखनी से निकले हुए निम्नाङ्कित विषय कितने ही मनोरजक एवं सुरुचिपूर्ण उतरे हैं, यह पढकर ही पूर्णतया विदित हो सकता है। निबधो के कुछ शीर्षक अधोलिखित हैं ।

'मेरा मकान' 'सेवा के पथ पर' 'आप बीती' 'खट्टे अगूर' 'एक स्केच' आदि ।

सभी मे आत्मकथा है, छात्र जीवन, बोर्डिङ्ग हाउस इत्यादि के चित्र हैं।

'साहित्य संदेश' मे तो आपके अनेक लेख प्रायः निकलते ही रहते

हैं। उनके अतिरिक्त ४५ साहित्यिक निबधों का एक सग्रह 'प्रबध प्रभाकर' के नाम से लाहौर से निकला है। इनमे से लगभग दो तिहाई साहित्य एव काव्य पर ही हैं।

"वर्तमान हिन्दी कविता की प्रगति', "समाज पर साहित्य का प्रभाव" "हिन्दी मे हास्य रस" "काव्यकला और चित्रकला", "हिन्दी साहिय में नाटक" "हिन्दी गद्य का विकास" "मातृभाषा का महत्व", "ब्रजभाषा और खड़ी बोली", "गोस्वामी तुलसीदास" "देव और विहारी" इत्यादि।

शेष जो अन्य प्रकार के निवध हैं उनमे से कतिपय इस प्रकार हैं— 'शिक्षा का ध्येय', 'प्रतिभा का क्षेत्र, 'लोकोपकार और सेवाधर्म, 'ग्राम मे वर्षाकालीन शोभा', 'सम्पति का सदुपयोग', 'नागरिक कर्तव्य'।

ऊपर के विषयों की भिन्नता तथा विविधता से इतना तो स्पष्ट ही है कि श्री गुलाबराय जी का सभी क्षेत्रों पर अधिकार है। उनकी प्रतिभा बहुमुखी है और उनका ज्ञान अगाध है। उक्त पुस्तक के प्रारंभ मे लेखन कला के संबध मे "कुछ ज्ञातव्य बाते" शीर्षक छोटा सा लेख भी दिया है, जो साधारण विद्यार्थियों के अच्छे काम का है।

पुस्तक के काव्य तथा साहित्य विषयक लेख साधारण समालोचना समन्वित ही हैं, 'निबधत्व' से अनुप्राणित नहीं परन्तु दूसरे प्रकार के लेख अच्छे हैं। नीचे 'लोकोपकार और सेवाधर्म से' उदाहरण दिया गया है जिससे लेखक की भाव व्यंजना शैली पर ही प्रभूत प्रकाश नहीं पड़ता, उसकी भाषा कितनी परिष्कृत, प्रवाहमयी, शुद्ध एवं उपयुक्त है यह भी हृदयंगम हो जाता है।

"सेवा धर्म द्वारा जितना उपकार उपकृत पुरुष का होता है उससे अधिक उपकार उपकारी का होता है। कर्तव्यपालन और आलस्य त्याग की बड़ी भारी प्रसन्नता होती है। इस प्रसन्नता के अतिरिक्त

मनुष्य मे सहृदयता के कोमल भावों की वृद्धि होती है। दया और क्षमा भाव उपकारी और उपकृत दोनों को पवित्र करता है। उदार मनुष्य अपनी आत्मा को विस्तृत रूप मे देखने लगता है। जिन लोगों की सेवा की जाती है वे आत्मीय से हो जाते हैं। उदार मनुष्य सच्चा वीर बन जाता है। स्वार्थी मनुष्य कायर होता है। सेवा त्याग का मार्ग है। जो मनुष्य त्याग नहीं कर सकता वह वीर नहीं। इसलिए साहित्य के ग्रथों मे वीर रस के वर्णन मे दयावीर और धर्म वीर को भी स्थान दिया गया है। सेवा से विनय भाव बढ़ता है और विनय ही मनुष्यता है...

परहित सरिस धर्म नहि भाई। परपीड़ा सम नहिं अध भाई।"

———

शेष लेखक

इस परिच्छेद मे वर्तमान काल के निबधकारो का वर्णन किया जायगा। गद्य साहित्य के विकास तथा खड़ी बोली के परिमार्जित होने के साथ साथ निबध भी उन्नति कर रहा है। आधुनिक काल मे अनेक लेखक हैं, कुछ की रचना मात्रा मे अधिक हैं, कुछ की मूल्य मे इनकी रचनाएँ पुस्तकाकार अथवा पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित भी हो चुकी हैं और अभी भी हो रही हैं। दो एक को छोड़ कर इनकी अपनी कोइ विशिष्ट शैली निर्धारित नहीं हो पाई है अतः नीचे की पंक्तियों मे उनकी शैली समीक्षा को भी अधिक स्थान नहीं मिल सका है। साथ ही इस परिच्छेद के लेखकों की कृतियों से अवतरण भी, इसीलिये, नही प्रस्तुत किये गए हैं। दूसरे आधुनिक लेखको की रचना से लोग परिचित भी अधिक हैं आधुनिक लेखकों के निबध, निबंध की उस प्रारभिक कसौटी—आत्मीयता और व्यक्तित्व—पर, बहुत कम उत्तम कोटि आएँगे। वास्तव मे अब निबध की कल्पना मे ही अन्तर हो गया है, अब तो प्रायः सभी विद्वान् आलोचनात्मक एवं साहित्य सबधी लेख, उन्हे निबध भी कह सकते हैं, लिखने मे अपनी लेखनी की सफलता समझते हैं। अतः शेष लेखको का वर्णन किया जाता है।

इनमे से प० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी हमारा ध्यान सबसे पहले आकर्षित करते हैं। आप हिन्दी के तो उत्कट विद्वान हैं ही, पाश्चात्य भाषाओं तथा उनके साहित्य के भी अच्छे पडित हैं। इसी कारण उनके निबंधों मे पश्चिमीय ढग की समीक्षा तथा पश्चिमीय साहित्य से भारतीय वाङ्मय की तुलना प्रायः देखी जाती है। आप के इस विस्तृत दृष्टिकोण के ही कारण आपके एक लेख सग्रह का नाम ही "विश्वसाहित्य है"। इसमे इटली फ्रांस, जर्मनी, इङ्गलैण्ड आदि के साहित्य

(नाटक, उपन्यास, काव्य आदि) के प्रमुख तत्वों पर भारतीय दृष्टिकोण से प्रकाश डाला गया है। कुल इसमे १० निबध हैं, जिनके नाम ये हैं :—

"साहित्य का मूल" "साहित्य का विकास" "साहित्य का सम्मिलन "काव्य विज्ञान" "नाटक" "तीर्थसलिल" "कला" "विश्वभाषा" "साहित्य और 'धर्म'।

बख्शी जी ने एक पुस्तक केवल लिखने के ही विचार से प्रस्तुत की है। उसका नाम है 'प्रवध पारिजात'। इस पुस्तक मे कुछ 'नुस्खे' हैं, कुछ 'सूचनाएँ' दो चार 'कहानियाँ' भी, 'पत्र' भी'; कुछ 'कथोपकथन' कुछ 'चुटकुले'—और उसका नाम है 'प्रवध पारिजात'।

उदाहरणार्थ 'भेद' का भेद देखिये:—

आम ने बबूल से कहा, "भाई ! तुम क्यों फूलते फलते हो? तुम्हारी छाया भी व्यर्थ है। सचमुच तुम्हारा भाग्य बड़ा बुरा है।"

बबूल ने कहा—'भाई तुम जीवित रहते हो तभी फल देते हो, पर मेरी सफलता अपने को भस्म रखने मे ही है।"

अतः बख्शी जी का प्रवध पारिजात साहित्यिक निबधो की कोटि मे नहीं रखा जा सकता। हाँ कुछ लेख ऐसे अवश्य हैं जो लेखक के हृदय का प्रकाशन हैं अतः वे अच्छे भी हैं—जैसे 'जाति और साहित्य' और 'विश्व वाटिका'।

बख्शी जी की तीसरी पुस्तक है 'पचपात्र'। इसमे पाँच विभाग हैं—पद्य, साहित्य, हिन्दी काव्य, समस्या और विनोद। इनके अतर्गत इस प्रकार के लेख हैं।

"उपन्यास रहस्य" "हिन्दी काव्य में प्रेम" हिन्दी काव्य मे सौंदर्य सृष्टि" "राष्ट्र समस्या" "छायावाद" "धर्म रहस्य"।

इसके अतिरिक्त बख्शी जी ने भिन्न भिन्न लेखको के निबंधों को लेकर दो तीन पुस्तकों का सपादन भी किया है, जैसे साहित्य शिक्षा, नवयुग पाठमाला, हिन्दी गद्यमाला ।

कुंवर राजेन्द्र सिंह भी हिन्दी के एक उदीयमान निबंध लेखक हैं। पता नहीं किस कारण से अब आपके निबंध प्रायः नहीं के बराबर देखने आते हैं। किन्तु दो ही चार वर्ष पहले तक आप सुन्दर विषयों पर 'सरस्वती' मे लिखते रहे हैं। "गन्ध" "सौंदर्य" आदि पर आपने सुन्दर मनन योग्य निबंध लिखे हैं जिनसे आपकी विस्तृत अध्ययन-शीलता और भावों को प्रकाशित करने की अपूर्व शक्ति का पता चलता है।

बा० व्रजमोहन वर्मा भी एक कुशल निबंधकार हैं। उनका शब्द चयन बड़ा सुन्दर एवं विषयानुकूल रहता है। आपके निबंधों की कोई पुस्तक प्रथक् नही प्रकाशित हुई किन्तु 'विशाल भारत' मे आपके निबंध प्रायः दिखाई दे जाते थे। 'खुदाई का मास्टर पीस' 'हमारा पेशवा' प्रभृति कतिपय उत्कृष्ट निबंध उक्त पत्रिका मे निकले थे।

सरस्वती संपादक श्री नाथ सिंह जी भी जब वैयक्तिक द्वेष से अपनी रचना की प्रेरणा न ग्रहण कर स्वतन्त्र रूप से लिखते हैं तब अच्छे निबंध-साहित्य का निर्माण कर देते हैं। रोचकता उनके लेखों का प्रधान गुण है। इनके लेख 'सरस्वती' मे ही बहुधा दिखाई पड़ते हैं।

लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी अध्यापक डा० पीताम्बर दत्त जी भी एक अच्छे निबंध लेखक हैं। बड़थ्वाल जी[1] यद्यपि समालोचक पहले हैं, जिस रूप मे उन्होंने तुलसीदास, कबीरदास, केशवदास और संत साहित्य पर अपनी विज्ञतापूर्ण कुशल लेखनी से लिखकर हिन्दी-संसार का मस्तक ऊँचा किया है, तथापि यदा कदा निबंध भी अच्छे लिखते हैं यथा 'महाकवि केशवदास' 'हिन्दी साहित्य मे उपासना का स्वरूप' 'जायसी का अध्यात्मवाद' 'गंगाबाई'।

इसी प्रकार प० सद्गुरु शरण अवस्थी भी एक उच्चकोटि के निबन्धकार हैं। अभी तक उनके इस रूप से अधिकांश हिन्दी संसार अपरिचित ही था, परन्तु अब उनके विचारात्मक निबंधों का संग्रह

[1] शोक है कि गतवर्ष उनका देहान्त हो गया।

'विचार विमर्श' नाम से तथा साहित्यिक निबधों का सग्रह 'हृदय ध्वनि' नाम मे पुस्तकाकार हो चुके हैं। बादवाली पुस्तक मे १४ श्रेष्ठ निबध हैं। कुछ शीर्षक इस प्रकार हैं :—

'हाँ' 'इक्का' 'पल्हड़' 'बड़े बाबू' 'अवकार' 'रामचन्द्र शुक्ल'।

इन लेखकों के उपरान्त प० नन्ददुलारे वाजपेयी प० हजारीप्रसाद द्विवेदी उच्चकोटि के लेखक व समालोचक हैं। आपके लेख हिन्दी साहित्य की स्थायी सपत्ति हैं, परन्तु पाश्चात्य निबध के आदर्श पर ये नहीं लिखे गए हैं। प्रथक पुस्तक के रूप मे इनमे से किसी के निबधो का महत्व नहीं प्रस्फुटित हो पाया है, 'विशाल भारत' 'माधुरी' 'सरस्वती' आदि सामयिक पत्रिकाओं मे ही इन लेखकद्वय के लेख मिल जाते हैं। वाजपेयी जी ने "साहित्य सुषमा" नामक एक सग्रह ग्रथ में १२ अच्छे साहिय विषयों पर लिखे गए लेखो का सकलन भी किया है जिनमे श्री रामकुमार वर्मा का 'रगमञ्च' तथा बाबू मैथिलीशरण गुप्त का 'कल्पना और यथार्थ' अन्य निबधों की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं, किन्तु उक्त पुस्तक मे वाजपेयी जी का अपना एक लेख भी नहीं है।

यत्र तत्र प्रकाशित सामग्री मे से वाजपेयी जी के 'एकाकी नाटक' 'जैनेन्द्र पर विचार' ये दो निबध पर्याप्त मात्रा मे सुन्दर हैं। तदनन्तर 'काव्य और कला' तथा 'सूर सदर्भ' इन पुस्तको की भूमिका मे भी वाजपेयी जी की कुशल लेखनी का परिचय मिलता है। गतवर्ष 'जयशकर प्रसाद' नाम से प्रसाद जी पर एक सुन्दर समालोचनापूर्ण पुस्तक भी आपने लिखी थी।

आलोचनात्मक लेख या निबध लिखनेवालों में श्री शातिप्रिय द्विवेदी तथा श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' के नाम भी चिरस्मरणीय रहेगे। द्विवेदी जी की तो पाँच पुस्तकें[1] प्रकाशित हो चुकी हैं जिनके नाम हैं :—

---

[1] सुनते है कि युग और साहित्य नाम की एक पुस्तक द्विवेदी जी की और भी है।

'हमारे साहित्य निर्माता' 'कवि और काव्य' 'साहित्यिकी' 'संचारिणी' तथा 'जीवनयात्रा'। इन पाँचो पुस्तकों मे प्रायः ८० निबध हैं। आत्म-गत विचारों की दृष्टि से अनेक लेख अच्छे हैं जैसे 'मीरा का तन्मय सगीत' 'कवि की करुण दृष्टि' 'कवि का मनुष्यलोक' एवं 'वेदना का गौरव'—ये चार निबध 'कवि और काव्य' मे, 'कविता और कहानी' 'औपन्यासिकता पर एक दृष्टि' 'साकेत मे उर्मिला' 'गद्यकार निराला' तथा 'गोदान और प्रेमचद'—ये 'साहित्यिकी' में; 'कला जगत् और वस्तु जगत्' 'छायावाद का उत्कर्ष' और 'हिन्दी गीतकाव्य' ये तीन निबध 'सचारिणी' मे तथा 'जीवन की ज्वाला' 'हँसता जीवन' 'प्रोत्सा-हन' 'युद्ध की विभीषिका' 'जीवन यात्रा' मे। ये श्रेष्ठातिश्रेष्ठ साहि-त्यिक निबंधों के समकक्ष स्थान पाने के अधिकारी हैं।

साहित्यिक विषयों पर आलोचनात्मक लेख लिखने वालों मे सबसे अधिक निबधत्व का प्रधान गुण एव अवयव—आत्मीयता—श्री शाति प्रिय जी मे ही मिलती है। आपके लेख विस्तृत अध्ययन के परिणाम नहीं हैं, प्रत्युत किसी भी विषय को लेकर उसमे सीधे दूर तक घुसकर कौड़ी लाने के प्रयत्न प्रतीत होते हैं। निबध का एक यही महत्वपूर्ण गुण है।

श्री शातिप्रिय द्विवेदी के निबधों के विषय मे डाक्टर रामकुमार वर्मा की सम्मति है कि "शाति प्रिय द्विवेदी ने अपने निबंधो की पृष्ठ-भूमि न तो सस्कृत साहित्य मे ली है और न अग्रेजी साहित्य से। उन्होंने अपनी मननशीलता में ही, अपने बौद्धिक स्तर मे ही, अपनी आलोचना के आदर्श स्थापित किए हैं—लेखक ने अपना हृदय पिघलाकर उन आदर्शों को प्राप्त किया है।"

द्विवेदी जी के निबधों मे मुख्यतया दो शैलियाँ उपलब्ध होती हैं, एक आलोचनात्मक शैली, जिसमे विचारों की प्रधानता रहती है, लेखक मननशील होकर अपने अनुभव को प्रकट करता चलता है,

दूसरी भावात्मक शैली, जिसमे हास्य एवं विनोद की मात्रा प्रधान रहती है। पहली मे भाषा शुद्ध एव परिमार्जित रहती है, दूसरा मे विदेशी भाषाओं के अनेक शब्दों एव मुहावरो-कहावतो के प्रयोग के कारण भाषा मे व्यावहारिकता तथा सुबोधता रहती है।

कालिदास कपूर भी इस श्रेणी के एक अच्छे लेखक हैं। उपन्यासों का आपका अध्ययन गभीर है अतः रगभूमि, प्रेमाश्रम, सेवासदन, हिन्दी मे उपन्यास साहित्य, ये निबध प्रौढ हैं। पत्र-पत्रिकाओ मे आपके लेख प्रायः दृष्टिपथ मे आ जाते हैं। १० लेखों के एक संग्रह—साहित्य समीक्षा-को आपने मुद्रित भी करवाया है।

पं० रामकृष्ण 'शिलीमुख' भी कवियों तथा साहित्यिक विषयो पर अच्छी आलोचनाएँ लिखते हैं। वे भी प्रायः निबध कोटि की अधिकारिणी हैं। इनकी 'सुकवि-समीक्षा' मे हिन्दी साहित्य के प्राचीन कतिपय प्रमुख कवियों पर आलोचनात्मक प्रबध लिखे गये हैं जैसे मीराबाई, सूरदास, तुलसीदास, भूषण, हरिश्चन्द्र, जयशंकर प्रसाद आदि।

प० प्रभुनारायण के नौ लेख 'विचार वैभव' नामकी पुस्तक मे निकले हैं। मौलिक चिंतन एव मनन की दृष्टि से सभी अच्छे हैं। विषय प्रायः कविता से सबध रखने वाले हैं यथा काव्य मे कल्पना, रसोद्रेक, वादत्रयी, काव्य मे अलकार का स्थान।

इधर श्री जैनेन्द्र कुमार जी ने कहानी तथा उपन्यासों के अतिरिक्त निबध भी लिखना प्रारभ किये हैं। आपके निबध भी अधिकाश मे साहित्यिक विषयों पर ही होते हैं। ये लेख 'हंस' में तो प्रायः देखने को मिलते ही हैं 'जैनेन्द्र के विचार' नाम से प्रथक् पुस्तकाकार भी प्राप्य हैं। उनके लेखो में मौलिकता है, गभीरता है, तथा भावाधिक्य के कारण वाक्य सूत्रवत् हैं। शैली एव भाषा बड़ी ही स्वाभाविक है।

परन्तु शुद्ध निबंध रचना की दृष्टि से एक नाम बड़ा ही महत्वपूर्ण

रह जाता है, क्योंकि उस नाम से कवि के रूप मे तो बहुत लोग परिचित हैं, परन्तु एक श्रेष्ठातिश्रेष्ठ निबधकार के रूप मे वह नाम कम लोगों को ही ज्ञात है। ये महानुभाव हैं सियाराम शरण गुप्त। पश्चिम के प्रारभिक दृष्टिकोण से आजकल हिन्दी मे यदि कोई लेखक निबधकार कहा जा सकता है तो हमारे गुप्त जी ही की ओर अगुलि-निर्देश होता है। एक सीधे तथा सक्षिप्त रूप मे आत्मकथन इनके निबधो की विशेषता है। आपकी निबध-पुस्तक का नाम है 'झूठ सच'। इसमे २८ निबध हैं किन्तु निम्नलिखित चार छः तो मुझे बहुत सुन्दर प्रतीत हुए।

'बहस की बात' 'अपूर्ण' 'एक दिन' 'बाल्यस्मृति' 'निज कवित्त, इत्यादि।

उक्त पुस्तक के 'प्रारभिक' के कुछ वाक्य जो गुप्त जी के ही हैं हमारे विषय से विशेष संबध रखते हैं अतः लिखे जाते हैं :—

"कई बरस पहले बंधुवर बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने एक बार मेरे विषय में कुछ ऐसी बाते लिखीं थीं कि मैं कविता मे अनादृत हुआ, इसलिए उधर से हट मैंने यह लिखा-वह लिखा, और और-कुछ लिखा; और अब मै निबध लिखने की सोच रहा हूँ।"

प्रयाग विश्व विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा० धीरेंद्र वर्मा भी एक अच्छे विचार प्रधान लेखक हैं। आपकी शैली बड़ी स्पष्ट, विषय प्रतिपादन बड़ा सुलझा हुआ और सामग्री प्रायः मौलिक है; जिस विषय को आप उठाते हैं, उसी पर अपनी पैनी दृष्टि से अनेकागी प्रकाश डाल देते हैं। आपका लेख संग्रह 'विचार धारा' के नाम से साहित्य भवन, प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है।

यह सामग्री पाँच भागो मे विभक्त है—'खोज' 'हिन्दी प्रचार' 'हिन्दी साहित्य', 'समाज तथा राजनीति' और 'आलोचना,' तथा 'मिश्रित'। जैसा कहा जा चुका है, मौलिकता इनका प्रधान गुण है। इन पाँच भागों मे ३४ लेख हैं। इन सभी मे बहुधा रूक्षता सी मिलती

है,—उसका कारण चाहे विषय की शुष्कता हो अथवा स्वयं लेखक के व्यक्तित्व की गंभीरतापूर्ण नीरसता हो। वर्मा जी में शुद्ध निबंधकार के गुण अल्पमात्रा में ही हैं यद्यपि उनके एक सफल शिक्षक तथा विद्वान् होने में कोई भी संदेह नहीं। उनके उक्त लेखों को किसी तत्तद्विषयक पुस्तक के परिच्छेद मात्र ही कहना अधिक संगत होगा, क्योंकि उनमें विचारों को प्रकट करना मात्र एक उद्देश्य है, प्रति पादन की रोचकता की ओर ध्यान कम है। उनमें 'क्या' का संतोषप्रद उत्तर है, किन्तु 'कैसे' का प्रश्न रह जाता है। यह दूसरी वस्तु—'क्या'—ही हमारे अधिक काम की है और यही लेख को 'निबंध' संज्ञा प्रदान करती है। उक्त पुस्तक के निबंधों के कतिपय शीर्षक ही प्रकट कर देंगे कि वे निबंध कोटि से दूर ही समझे जायगे।

संयुक्त प्रान्त में हिन्दू पुरुषों के नाम, हिन्दी भाषा संबंधी अशुद्धियाँ, हिन्दी वर्णों का प्रयोग, अवध के जिलों के नाम, हिन्दी की भौगोलिक सीमाएँ, क्या प्रस्तावों के द्वारा हिन्दी का काया कल्प हो सकता है, क्या दो सौ बावन वार्ता गोकुलनाथ कृत है, हमारे प्रान्त की कुछ समस्याएँ; हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण।

यही नहीं 'हिन्दी साहित्य के वीर रस' 'अध्यापिका वर्ग' और 'तीन वर्ष' आदि शीर्षक निबंधों का भ्रम उत्पन्न कर सकते हैं; परन्तु ये भी दो दो तीन तीन पृष्ठ के साधारण विचार मात्र हैं—(अन्तिम तो भगवती चरण वर्मा की पुस्तक की पौने दो पृष्ठ का साधारण स्तुति मात्र है)—वास्तविक निबंध इनमें से कोई नहीं। संक्षेप में वर्मा जी के उदाहरण से हम कह सकते हैं कि एक असाधारण विद्वान् का एक उत्तम निबंधकार होना आवश्यक नहीं। लेखक और निबंधकार में तो स्पष्ट अन्तर है ही।

"इन महानुभावों के सिवाय प्रो० (अब डाक्टर) रामकुमार वर्मा भी कभी कभी उत्तम निबंध सृष्टि (!) कर देते हैं। श्री संतराम बी०

ए० भी अच्छे निबधकार हैं . ... प्रो० हसराज भाटिया एम० ए० यद्यपि हिन्दी के विशेषज्ञ नहीं हैं पर कभी कभी उत्तम निबध लिखते हैं। हाँ, उनमे अँग्रेजी की पालिश रहती है, पर मौलिकता उनकी है। बा० शीतला सहाय और राहुल साकृत्यायन भी बड़े अध्ययन के बाद लिखते हैं।" श्री राहुल जी की पुस्तक—'क्या करे'—मे नौ लेख हैं; विषय और सामग्री सामयिक है, यथा 'क्या जापान हमारा पड़ोसी बनेगा' 'रूस की पचायती खेती' आदि।

श्रीयुत डाक्टर राम शकर शुक्ल 'रसाल' ने भी कई प्रकार के विशेष निबधों के लिखने का अभ्यास किया, जैसे किसी मे कवर्ग का कोई अक्षर नहीं, किसी लेख मे दीर्घ वर्ण ही नही, किसी मे ओष्ठ्य वर्ण ही नहीं आदि, किन्तु ये सब मानसिक व्यायाम थे और प्रकाशित भी कभी नहीं हुए। इलाचद जोशी ने भी कुछ साहित्यिक निबध लिखे हैं। 'साहित्य सर्जना' इनके लेखों का अच्छा सग्रह है। श्री गगा प्रसाद पाडे भी एक उदीयमान लेखक हैं। आपने थोड़ी सी ही अवस्था मे 'निबधिनी' 'काव्य कलना' और 'नीर क्षीर' ये तीन पुस्तकें अपने आलोचनात्मक लेखों की निकलवा दी हैं।

श्री प्रभाकर माचवे एक अच्छे विचार प्रधान लेखक समझे जाते हैं। यद्यपि आपके 'साहित्य मे प्रगतिवाद की इष्टानिष्टता' 'जैनेन्द्र' आदि थोड़े ही लेख हिन्दी ससार को मिले हैं, तथापि आपकी प्रसिद्धि कम नहीं है। इसी प्रकार प्रो० नगेन्द्र के भी कुछ लेख या विचारात्मक निबंध अनूठे हैं यथा 'हिन्दी कविता की नवीनतम प्रगति', 'हिन्दी मे गीति-काव्य' आदि।

ठा० जगमोहनसिंह जी के ढग पर प्राकृतिक दृश्यों को लेकर सुन्दर सुरुचि पूर्ण रीति मे लिखने वालो मे दो नाम अधिक प्रसिद्ध हैं। निबध साहित्य की चर्चा मे उनका नाम विस्मृत हो जाना घोर अन्याय होगा। इनमे से पहला नाम हैं गणपति जानकीराम दुबे

का और दूसरा है बा० कृष्ण बलदेव वर्मा का। यद्यपि इस युग्म की भी रचना कलेवर की दृष्टि से अधिक नहीं है तथापि वह अपने क्षेत्र मे विशिष्ट पद प्राप्त है और इसीलिये अधिकाश निबध रचयिताओ मे मार्मिक भिन्नता रखता है। वर्मा जी का बुन्देलखड (ओड़छा) पर विशेष अध्ययन है और 'बुन्देलखड पर्यटन' नाम से आपने अधिक लिखा है।

श्री रामदास जी गौड़ के लेख वैज्ञानिक विषयों पर बड़े ही सुन्दर लिखे मिलते हैं; किशोर लाल मश्रुवाला का भी अपनी विशिष्ट शैली के कारण, निबधकारो म परिगणन उचित ही होगा। काका कालेलकर के हिन्दी भाषा सबधी लेख सुन्दर होते हैं। इनके उपरान्त रामनाथ 'सुमन' तथा गणेश शकर विद्यार्थी भी अच्छे लेखक हैं और इनके लेखो मे से कुछ 'निबध' भी हैं, यह मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया जायगा, परन्तु इनकी कृतियाँ पुस्तकाकार नहीं हुई हैं। पत्र पत्रिकाओ मे ही इनकी यह सामग्री प्रकाश मे आई है।

प० हरिभाऊ उपाध्याय ने भी समाज विज्ञान सबधी कुछ बहुत सुन्दर निबध लिखे हैं; इनकी शैली प्रभावोत्पादक है, भाषा भी बड़ी साधु-सुष्ठु है। इनके विचारो की एक पुस्तक भी प्रकाशित हुई है। उसका नाम है 'स्वतत्रता की ओर' इसमे जीवन को उन्नत तथा सात्विक बनाने वाले श्रेष्ठ विचारों का सगुफन है। अनेक छोटे बड़े विचारात्मक निबधों के द्वारा राजकीय स्वतंत्रता तथा वास्तविक स्वतत्रता का भेद दिखलाया है। कतिपय निबधों को हम उत्तमोत्तम कोटि के निबधों मे रख सकते हैं यथाः—स्वतत्रता का पूर्ण स्वरूप, स्त्री का 'महत्व', 'सौदर्य और सदाचार' 'धर्म और नीति' 'गृह कलह की आशका'। इनमे कहीं कहीं सूत्र के समान विचारो से ओत प्रोत वाक्यों को देखकर शुक्ल जी का स्मरण हो आता है। उदाहरणार्थ दो चार वाक्य दिये जाते हैं :—

'नीति प्रेरक है, धर्म स्थापक" "सहयोग जीवन का तत्व है, विरोध जीवन का दोष है।" 'महज सुखोपभोग की सुविधा को स्वतन्त्रता समझ लेना हमारी भूल है'।

श्री देवशर्मा 'अभय' की 'तरंगित हृदय' एक सुन्दर पुस्तक है। इसके २१ लेखों में यद्यपि शुद्ध निबंध के समकक्ष कोई स्थान नहीं पाता है फिर भी कुछ लेख रोचक अवश्य हैं यथाः—नमस्कार, तेरा कौन है, चातक का वैराग्य, तेरी धोखेबाजी, निराले आदमी, थोड़ा सा। इसी प्रकार कविवर मोहनलाल महतो की पुस्तक 'विचारधारा' में भी १३ सुन्दर लेख हैं परन्तु विषय सब के सामयिक हैं, और निबंध कोटि से अत्यंत दूर हैं यथा "गांधी जी", 'सरकार और अर्थचक्र'। एक आध साहित्यिक विषय भी है जैसे 'साहित्य और समाज'।

इस प्रसंग को यहाँ पर केवल यह कह कर ही समाप्त किया जाता है कि आज कल छोटे बड़े अनेक लेखक तथा निबंधकार हैं जिनकी नामावली चाहे कितनी ही सावधानी से क्यों न बनाई जाय, फिर भी कुछ न कुछ छूट ही जायँगे। लगभग एक दर्जन से अधिक हिन्दी की सुन्दर साहित्यिक मासिक पत्रिकाएँ निकल रही हैं, कुछ साप्ताहिक और पाक्षिक भी हैं इन सभी में नए पुराने अनेक लेखक लेख-कहानी-निबंध भेजा करते हैं अतः इन सब का नामोल्लेख असंभव ही नहीं निरर्थक भी है क्योंकि उन लोगों की निबंध संबंधिनी न तो कोई विशेषताएँ ही प्रकाश में आई हैं और न उनकी प्रसिद्धि ही इतनी हो सकी है अतः ऐसे सब लेखकों से उनके नाम न दे सकने की क्षमा याचना का प्रार्थी हूँ।

लेखिकाएँ

इस समय तक हमने निबध साहित्य का जितना विवेचन या दिग्द-र्शन किया उससे एक बात की ओर हमारा ध्यान स्वभावतः आक-र्षित हो जाता है। वह यह कि इस निबध साहित्य के उन्नायकों मे हमे स्त्रियों का हाथ नहीं दिखाई पड़ा। एक तो वैसेही स्त्रियाँ साहित्य के क्षेत्र मे कम आती हैं, जो आती भी हैं वे निसर्गतः भावुक और कोमल हृदय की होने के कारण कविता की ओर झुक जाती हैं, सुभद्रा कुमारी चौहान, तोरन देवी शुक्ल 'लली' तारा पाडे आदि कवयित्रियाँ तो हमे देखने को मिल भी जाती हैं किन्तु निबध लेखिकाओं का प्रायः अभाव ही है। मासिक पत्रिकाओ मे कभो किसी महिला का लेख देखने को भी यदि मिल जाय, तो भी हमारे ऊपर के कथन की सत्यता कम नहीं होती। यहाँ दो एक नामो का सकेत किया जा सकता है जैसे चदाबाई, कमलाबाई कीबे, कुमारी गोदावरी केतकर, चंद्रावती त्रिपाठी, रामेश्वरी नेहरू, उमा नेहरू, महादेवी वर्मा आदि। चदाबाई जी की तो एक साधारण सी पुस्तक भी उपलब्ध होती है जिसका नाम है "निबंध रत्न माला" श्रीमती रामेश्वरी नेहरू जी के लेख "स्त्री दर्पण पत्रिका" मे निकला करते थे जिसकी ये स्वयं सपादिका भी थीं। इसी प्रकार उमा जी भी स्वसपादित 'सहेली' पत्रिका मे लिखा करती थीं। श्रीमती वर्मा के विचारों का एक सग्रह "शृखला की कड़ियाँ" नाम से अभी साधना सदन प्रयाग से निकला है।

उक्त पुस्तक मे भारतीय नारी की समस्याओ का सुन्दर विवेचन अट्ठारह निबधों मे हुआ है। सभी निबंध मनन एवं चिंतन सापेक्ष हैं और अपनी विदुषी लेखिका के विस्तृत अध्ययन तथा विशाल अनुभव के परिचायक हैं।

शैली प्रौढ है और भाषा विषयानुकूल होने के कारण गभीरता सब निबधो का प्राण हैं। महादेवीजी के ये निबध विचारात्मक कोटि मे आयेंगे। व्यवसाय, जाति, अवस्था आदि सभी दृष्टियो से नारी का चित्रण हुआ है अतः भारतीय स्त्री के प्रश्न का कोई कोना अछूता नही रहा जहाँ पर लेखिका की पैनी दृष्टि का प्रकाश पड़ा न हो। नारी की लेखनी से नारी सबधी वस्तु का अनुभूतिपूर्ण होना स्वभाविक ही है। सब निबधों मे महादेवी जी के गभीर व्यक्तित्व की छाप है। यदि यह भी कहा जाय कि भारतीय नारी के सबध मे अब तक की परिस्थिति को देखते हुए किसी दृष्टि से अतिम शब्द कह दिया गया है, तो भी कोई अत्युक्ति न होगी। इनके विषय मे स्वय महादेवी जी का कथन है "प्रस्तुत सग्रह मे कुछ ऐसे निबन्ध जा रहे हैं जिनम मैने भारतीय नारी को अनेक दृष्टि बिदु से देखने का प्रयास किया है। अन्याय के प्रति मै स्वभाव से असहिष्णु हूँ अतः इस निबंधों मे उग्रता की गन्ध स्वभाविक है... ...।" पुस्तक के 'युद्ध और नारी' 'घर और बाहर', 'नारीत्व का अभिशाप आदि कुछ लेखो ने मुझे प्रभूत मात्रा मे प्रभावित किया है। यह समस्त सामग्री पाठक के विचारों को उत्तेजना प्रदान करनेवाली है और यह पुस्तक न केवल महिलाओ के निबन्ध साहित्य मे योगदान के अभाव की पर्याप्त पूरिका है, प्रत्युत हमे आशावादी बनाती है कि भविष्य मे इससे भी उत्कृष्ट वस्तु महादेवी जी की लेखनी से निःस्यूत होगी।

कुमारी दिनेश नन्दिनी चोरड्या भी एक भावुक हृदय गद्यलेखिका हैं। किन्तु उनका निबध क्षेत्र मे कुछ भी महत्व नहीं है। उनकी 'मौक्तिकमाल' वियोगी हरि के 'अन्तर्नाद' या रायकृष्णदास की 'साधना' के समान काव्यमय गद्य मे है। इसी प्रकार के भावात्मक गद्य लिखने वालियों में रामेश्वरी देवी गोयल का नाम भी महत्वपूर्ण है।

अनुवादित निबंध साहित्य

हमारे निबधो का एक पक्ष और भी अछूता पड़ा है और वह है अन्य भाषाओ के अच्छे अच्छे निबन्धों के अनुवाद का। कुछ निबधो के साधारण से अनुवाद के अतिरिक्त जिन लेखो का अच्छा अनुबाद भी हुआ है, वे लेख ही निबध कोटि मे नहीं आते। जैसा कि अभी प्रतीत होगा, इस प्रकार की सामग्री उँगलियों पर गिनी जा सकती है। स्व० रवीन्द्रनाथ ठाकुर की निम्नलिखित आठ पुस्तकों का अच्छा अनुवाद हुआ है।

"साहित्य" "प्राचीन साहित्य" "राजा और प्रजा" "स्वदेश" "समाज" "शिक्षा" "शिक्षा कैसी हो" तथा "विचित्र प्रबध"।

इन सब मे मिलाकर लगभग ६० निबध हैं। किन्तु वास्तविक निबध कोटि तक थोड़े ही पहुँचते हे जैसे 'सौदर्य-बोध', 'सौदर्य और साहित्य,' "साहित्य सृष्टि" 'पूर्व और पश्चिम,' 'समाजभेद', 'आवरण,' 'राजभक्ति,' 'काव्य की उपेक्षिता' आदि। इनमे भी दो लेख तो बहुत ही उच्च कोटि के हैं 'सौदर्य बोध' तथा 'राजभक्ति'।

दूसरा उल्लेख्य अनुवाद है बकिम बाबू के निबंधों का। ये निबध 'बकिम निबधावली' के नाम से मिलते हैं। इसमे उक्त बाबू साहब के २५ चुने हुए निबध दिए गये हैं, अतः सभी निबध कोटि मे रखे जा सकते हैं। बकिम बाबू के निबध क्षेत्र से परिचय प्राप्त करने के लिए उदाहरणवत् उनके निबंधों के दो चार नाम ये हैं:—

"धर्म और साहित्य", "गीति काव्य", "बाहुबल और बाक्य बल" "मेघ"।

प० गगा प्रसाद अग्निहोत्री कृत मराठी विद्वान् चिपलूणकर के

पाँच लेखों—विद्वत्व और काव्यत्व, समालोचना, अभिमान, संपत्ति का उपभोग, वक्तृता,—के अनुवाद का संकेत अन्यत्र भी हो चुका है। यह अनुवाद 'निबंधमालादर्श' के नाम से किया गया है। इसी प्रकार पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी कृत बेकनके निबंधों के अनुवाद का नाम 'बेकन विचार-रत्नावली 'भी पहले ही लिया जा चुका है।

परन्तु जैसा कि कहा जा चुका है इस क्षेत्र मे बड़ी न्यूनता है। अँग्रेजी, फ्राँसीसी, जर्मन आदि अनेक पाश्चात्य भाषाओं, तथा मराठी, गुजराती, बंगाली आदि अपने देश की ही भाषाओं मे अनेक अच्छे अच्छे निबंधरत्न पड़े होंगे जिनके अनुवाद द्वारा अपने साहित्य कोष को प्रभूत देखकर किसी भी भाषा को गर्व हो सकता है, किन्तु न जाने क्यों हिन्दी भाषियों और मातृभाषा प्रेमियों की इस ओर उपेक्षा-दृष्टि चल रही है। जिस तीव्र गति से उपन्यास तथा नाटको का अनुवाद हिन्दी मे आ रहा है, यदि उसकी आधी चाल से भी निबंध आएँ, तो हिन्दी निबंध साहित्य की इतनी शोचनीय दशा न रहे, यह निश्चित है।

पाठ्य-पुस्तकें : "बातों के संग्रह"
'संपादित-सामग्री'

अत मे जैसा कि अन्यत्र कहा जा चुका है, उन पुस्तकों की चर्चा करना अभीष्ट है जो पाठ्य पुस्तकों के रूप मे या साधारण विद्यार्थी को निबध नाम की विलायती चिड़िया से परिचित बनाने के लिये लिखी गई हैं। विवेचन के सुविधार्थ इनको दो वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है, एक तो वे पुस्तकें जो दशम श्रेणी से नीचे के विद्यार्थियों के लिए हैं और दूसरी वे जो उससे उच्च श्रेणी के लिए हैं। ये दूसरे प्रकार की रचनाएँ तो दाल मे नमक के बराबर ही ठहरती हैं।

प्रथम वर्ग मे प० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी का नाम मुख्य है। चतुर्वेदी जी ने 'हिन्दी-निबध-शिक्षा' 'प्रबध रचना शैली' प्रभृत कई पुस्तकें लिखी हैं, जो कुछ काल पूर्व तक बहुत दिनों से छोटे छोटे निबंध लेखको का पथ प्रदर्शन करती आ रही थीं। दूसरा नाम है प० गोकुल चद शर्मा का। आपकी 'निबंधादर्श' पुस्तक इस प्रकार की अन्य रचनाओं से कुछ अधिक श्रेष्ठ है क्योंकि यह कुछ कुछ पाश्चात्य शैली पर लिखी गई हैं।

तीसरी पुस्तक प्रो० राम रतन भट नागर कृत 'निबध प्रबोध' उपर्युक्त दोनों पुस्तकों मे श्रेष्ठ ही नहीं है, प्रत्युत कतिपय निबधों के आधार पर यह दूसरे वर्ग मे भी स्थान पा सकती है। निबध बड़े परिश्रम-सापेक्ष एवं मौलिक हैं। छात्रों की सुविधा की दृष्टि से सारी सामग्री चार भागो मे विभक्त है। विवरणात्मक, वर्णनात्मक, विवेचनात्मक तथा व्याख्यात्मक निबध अतिम दो शीर्षकों के अतर्गत प्राप्त वस्तु ही इस पुस्तक को द्वितीय वर्ग की अधिकारिणी बनाती है। इसके

विषय मे डा० धीरेन्द्र वर्मा की सम्मति है-"इस विषय पर अब तक जितनी भी पुस्तके मेरे देखने मे आई उन सब की अपेक्षा मुझे यह पुस्तक उत्तम जँची। विशेषतया ऊँची कक्षा के विद्यार्थी इसे अधिक उपयोगी पावेगे।'

इनके अतिरिक्त राम-दहिन मिश्र का हिन्दी रचना बोध, गगा सहाय शर्मा का प्रबध-पथ-प्रदर्शक, रामलोचन शरण का 'रचना नवनीत' चद्रमौलि शुक्ल की 'रचना पीयूष' रामरतन अध्यापक का 'रचना प्रबोध' जगदीश झा 'विमल' की 'हिन्दी-रचना-कौमुदी,' प० पारसनाथ त्रिपाठी का 'प्रबध पारिजात,' प० अगनलाल शर्मा का 'निबंध-सोपान' (जो कि मअराजुलइशा का नागरी अनुवाद है, 'हाई स्कूल क्लासो के निमित्त) प० बुद्धिनाथ शर्मा शास्त्री का' 'निबध नियम' प० मगलानद गौतम का 'निबध रचना सुरसरी' 'प० वासुदेव शर्मा कृत 'आदर्श निबध और (पत्रलेखन)' तथा प० रामनरायण चतुर्वेदी की 'निबंध चद्रिका' भी इसी नामावली को बढ़ाते हैं, और सभी इसी वर्ग की रचनाएँ हैं। अतिम दो पुस्तके अन्य पुस्तकों मे श्रेष्ठ भी हैं किन्तु इस लम्बी सी सूची से यह भ्रम नही होना चाहिए कि ये कितने उत्कृष्ट निबधों के सग्रह हैं। वास्तविक परिस्थिति यह है कि इन पुस्तकों म प्रारभिक शिक्षावाले विद्यार्थी के ज्ञान तथा परिचय के लिये मोटी मोटी बातों को ही निबध सज्ञा दी गई है।

इसी स्थल के अतर्गत कुछ ऐसी रचनाएँ भी ले लेना अनुचित न होगा जिनमे निबध तो नही हैं किन्तु निबध कला पर पूरी पुस्तक है जैसे डा० रामशकर शुक्ल 'रसाल' का 'रचना विकाश' तथा स्वा० सत्यदेव जी की 'लेखन कला'। यों तो प्रायः सभी पुस्तकों मे लेखन कला पर पुस्तक के प्रारभिक पृष्ठो मे कुछ न कुछ प्रकाश डाला जाता है, किन्तु कुछ पुस्तको मे पुस्तक का अधिकाश इसी हेतु लिखा जाता है यथा उपरिनिर्दिष्ट पुस्तकों मे प० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी की पुस्तके।

दूसरे वर्ग की रचनाएँ तो नाम मात्र की हैं। कारण स्पष्ट ही है कि प्रथम तो प्रौढ लेख लिखना ही कठिन, दूसरे जब विद्यार्थी कुछ ऊपर की श्रेणियो मे पहुँच गया तब उसे मोटी मोटी 'बातों' से परिचित कराने की आवश्यकता ही क्या। निबध-रचना के लिए काव्य के समान कोई नियम तो निर्धारित ही नही किए जा सकते, क्योंकि बुद्धि विकसित हो जाने के कारण तथा ज्ञानानुभव की वृद्धि हो जाने के कारण चाहे जिस विषय पर लिखा जा सकता है अन्यथा केवल निबध के नियमो तथा सिद्धान्तों को घोटकर, उनका पूर्णतया निर्वाह करते हुए, प्रौट निबध नहीं लिखे जा सकते। एक कारण और भी है कि उस बुद्धि विकाश के अतर 'रेल' 'मोटर' 'कुत्ता' 'स्कूल' पर निबध न पढकर गभीर विषयो पर निबध पढना और लिखना पड़ते हैं।—और ऐसे लेखक मिल ही जाते हैं जिनके भिन्न-भिन्न प्रकार के विशेष प्रबध पढे जा सके। अतः साधारण निबधो की आवश्यकता ही समाप्त हो जाती है। नामग्रहणार्थ 'रचना चद्रोदय' 'प्रबध प्रभाकर' के सदृश कतिपय रचनाएँ ही उत्तम हैं।

अभी 'साधनासदन' प्रयाग से श्री राजेन्द्रसिह गौड़ की एक पुस्तक 'निबधकला' प्रकाशित हुई है। निबध क्या 'रचनाकला' नाम अधिक सार्थक होता, क्योंकि लिखने से संबद्ध सब आवश्यक सामग्री पर लेखक ने प्रयास किया है। पुस्तक हिन्दी साहित्य का इतिहास (गद्य के विकास की दृष्टि से) भी हैं, भाषा विज्ञान (ससार की भाषाओं का विभाजन, भाषा की उत्पत्ति, परिवर्तन) भी और व्याकरण का तो एक अच्छा सा अश है क्योकि तत्सबधी सब ज्ञातव्य बाते (शब्दभेद, समास, सधि, तद्धित, कृदन्त आदि) उल्लिखित हैं। पुस्तक की उपादेयता मे कोई सदेह नहीं कर सकता और वास्तव में उक्त पुस्तक के द्वारा हिन्दी मे एक बड़े अभाव की पूर्ति हुई है। आरभिक लेखको का सुन्दर पथ दर्शन हो सकता है। यह पुस्तक 'रसाल' जी की तथा स्वा० सत्यदेव

जी की पुस्तकों से उत्कृष्ट है ।

यहाँ पर यह कहना अनावश्यक न होगा कि ऐसे लेखों या निबंधों में साहित्यिकता, प्रौढता, आत्मीयता या 'निबंधत्व' बहुत ही न्यून मात्रा में होते हैं लेखक को तो उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए कुत्ता बिल्ली से लगाकर गंभीर विषयों तक सभी पर लिखना पड़ेगा; परन्तु जब लेखक लिखने बैठता है तो यह संभव नहीं कि उसका सभी विषयों पर समान अधिकार हो, सभी में उसकी प्रतिभा का पुट लग सके, या सभी में उसकी चित्तवृत्ति समान रूप से रमण कर सके। सब प्रकार के निबंधों में उसके हृदय तथा उसकी आत्मा का सामंजस्य स्थापित नहीं हो सकता। किन्तु पुस्तक संपूर्ण करने के लिए उसे तो लिखना ही है, अन्यथा पुस्तक ही अपूर्ण रही जाती है, अतः वह उन विषयों को, जो उसकी रुचि के अनुकूल नहीं हैं, किसी प्रकार चलता कर देता है।

नितांत प्रारंभिक ज्ञान वाले छात्रों के निमित्त निर्मित निबंध-साहित्य में, जैसी पं० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी की पुस्तकें हैं, लेखक का लक्ष्य अनेक प्रकार के ज्ञान भांडार से बच्चे की बुद्धि को भरने का भी रहता है—इसीलिए 'प्रबंध-रचना-शैली' में लेख इस ढंग के भी हैं, 'रेल', 'कसरत' 'पुस्तकालय', 'यात्रा', 'दहेज' 'डायरी' 'सदाचार', 'मित्र', 'परिश्रम' इत्यादि। इन्हें दो दो तीन तीन पृष्ठों में 'बातों के संग्रह' ही कहना अधिक उपयुक्त होगा, निबंध नहीं।

निबंध के नाम पर इस प्रकार की सामग्री हिन्दी में बड़ी प्रचुर मात्रा में है। कुछ का दिग्दर्शन प्रसंगापेक्षित है। पहली पुस्तक है स्वा० सत्यदेव द्वारा लिखित 'सत्य निबंधावली'। किसी पुस्तकालय की पुस्तक सूची में उक्त नाम देखकर यही अनुमान होगा कि इसमें उत्कृष्ट निबंध मिलेंगे, परन्तु उसके कुछ लेखों के नाम जो अधोलिखित हैं, उनसे स्पष्ट पता चलता है कि पुस्तक का नाम बड़ा भ्रामक सा है।

'बोस्टन से मानचेस्टर', 'सिकन क्लास का साहब', 'गोमाता' आदि।

दूसरी पुस्तक है श्री रामलोचनशरण कृत 'नीतिनिबध'। इसके शीर्षक मे भी निबध शब्द बडा भ्रामक है, यही नहीं, पुस्तक के अन्दर लिखा है 'चुने हुए ४३ हिन्दी निबधो का सग्रह' परन्तु लेख हैं 'मद्यपान' पर 'बाल विवाह' पर 'आशा' पर 'सत्यवादिता' पर।

तीसरी पुस्तक है पडिता श्री चदाबाई कृत 'निबंधरत्नमाला'। इसमे भी निबध शब्द अपने दुर्भाग्य को रो रहा है। पुस्तक मे २० लेख हैं; कुछ उदाहरण हैं 'स्त्रियों मे उच्च विद्या' 'समय की उपयोगिता', 'कन्या महाविद्यालय', 'अशिक्षा की फलस्वरूपिणी झगड़ालू सास'।

चौथी पुस्तक है 'प्रबधरत्नाकर'। इसके लेखक हैं प० सकलनारायण शर्मा। पुस्तक मे 'सूर्य' 'दिवाली' 'मेला' 'गुरुपूजा', 'साइबेरिया' 'कपडा पहिनना', 'दूरवीक्षण यत्र' के सदृश ५२ लेख हैं।

पाँचवी पोथी है प० पारसनाथ त्रिपाठी कृत 'प्रबध पारिजात'। इसमे २७ लेख हैं यथा 'ज्ञान और परीक्षा', 'वाणिज्य व्यापार' आदि।

उपर्युक्त पुस्तको मे से लेख नाम ऐसे ही चयन किए गए हैं, जिनके नामों को ही देखकर अनुमान किया जा सकता है कि कैसी कैसी बातों पर—जो भिन्नातिभिन्न रुचि तथा अनेक प्रकार की हैं—निबंध लिखे जाते हैं। इनमे दो तीन पृष्ठो मे लेखक का एक मात्र उद्देश्य यह होता है कि वह अपने प्रस्तुत विषय का कुछ परिचय कर दे या सूचना के रूप मे आभास मात्र दे दे। इसके लिये लेखक को अपने ज्ञान, अपने अनुभव और अपनी विद्या की बडी आवश्यकता रहती है, क्योंकि परिचय जो कराया जाता है, वह इन्हीं 'बातो' का अथवा इन्हीं के आधार पर होता है।

ऐसे निबंधों मे न तो लेख के साथ पाठक की तन्मयता स्थापित होकर कुछ मनोरजन ही होता है, न उनमे आत्मीयता वा लेखक का व्यक्तित्व ही होता है, (जैसा कि प० प्रतापनारायण मिश्र आदि आरभ

कालीन लेखकों मे हमे उपलब्ध होता है) और न आधुनिक निबध-कारों के समान उनमे साहित्यिक एव समालोचनात्मक तत्व ही रहते हैं। इसीलिए ऐसी रचनाओ को आचार्य प० रामचद्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' मे 'बातों के संग्रह' नाम से अभिहित किया है।

कलेवर वृद्धि के भय से अधिक उदाहरण तो नहीं दिए जा सकते तथापि वस्तु स्थिति से सम्यक् परिचय प्राप्त करने के लिए कुछ अश देखना अनिवार्य भी है।

'वाणिज्य व्यापार' का प्रथम पैराग्राफ है।

"लड़कपन मे विद्यार्जनकर युवावस्था मे धनार्जन करने का समय है। धनार्जन के अनेक मार्ग हैं। वाणिज्य का मार्ग भी बड़ा प्रशस्त है। वाणिज्य मे अपनी और देश की भी वृद्धि होती है।"

'कपड़ा पहिनना' का प्रारभ ऐसे होता है।

'जब कोई मनुष्य किसी के पास जाता है तब दोनों की दृष्टि परस्पर पहले कपड़े पर जाती है। अतएव कोई किसी के विषय मे पहले कुछ अनुमान करता है तो उसका सहायक कपड़ा ही होता है। यही कारण है कि सभ्य समाज मे कपडो की काटछाँट और पहनने की शैली पर विशेष ध्यान दिया जाता है।'

'कन्या महा विद्यालय' से—

'प्रिय बहनो! आज बड़े हर्ष के साथ स्वागत आशा कुसुमों का एक सामान्य उपहार आपकी सेवा मे उपस्थित किया जाता है। आशा है कि आप लोग इन कुसुमों के सहारे फल प्राप्ति का प्रयत्न भले प्रकार सोंच सकेंगी।

'आशा' नामधेय निबध का अन्तिम भाग है।

'आशा सर्वदा बनी रहने के लिए हम लोगों को ईश्वर पर विश्वास रखना चाहिए। जो ईश्वर पर विश्वास रखता है वह समझता है कि

मेरी सहायता के लिए एक बड़ी शक्ति उपस्थित है और इस प्रकार उसकी आशा कभी भग होने ही नहीं पाती। दुनिया ब-उम्मेद कायम।'

'घड़ी मे चार बजने लगे थे, पजाब मेल की इतजारी मे मैं मुगलसराय स्टेशन के प्लेट फार्म पर टहल रहा था। आज गोरे मुसाफिरों की भीड़ अधिक थी। ये लोग मेरी ओर देख घूर रहे थे। कोई कोई भला मानुस मुसकुरा भी देता था।''

''सिकन क्लास का साहब''—से

अब केवल उन पुस्तकों की चर्चा करना शेष है जो कुछ विद्वानो ने अच्छे अच्छे लेखों या निबधों के सग्रह अथवा सपादन द्वारा प्रस्तुत की हैं। इनमे कुछ पाश्चात्य प्रणाली की शिक्षा की भिन्न भिन्न कक्षाओं के कोर्स के रूप मे हैं, और कुछ यो ही ज्ञान वृद्धि के निमित्त। उदाहरणार्थ उपेन्द्र शकर द्विवेदी के 'आदर्श निबध' का निर्देश भी हो चुका है। नद दुलारे वाजपेयी की 'साहित्य सुषमा' प० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की साहित्य शिक्षा, बा० श्याम सुन्दरदास की हिन्दी निबधमाला (दो भाग), डा० धीरेन्द्र वर्मा की 'परिषद् निबधावली' (दो भाग), रामचद्र वर्मा द्वारा सपादित 'निबध रत्नावली' श्री गोपाल चद्रदेव की 'निबध कुसुमावली' आदि इसी समुदाय की कुछ सुन्दर पुस्तकें हैं। यह सभी बड़ी पठनीय सामग्री है। अच्छे से अच्छे लेखकों के सुन्दरतम निबध इनमें सगृहीत हैं। यथा साहित्य शिक्षा मे प० हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'वर्तमान हिन्दी कविता' श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर का 'हिन्दी के मर्मी कवि', 'कहानी' और 'उपन्यास का विषय' मु० प्रेमचद जी के, श्री द्विजेन्द्रलाल राय का 'नाटक' तथा श्री जैनेन्द्र कुमार का 'प्रेमचद जी की कला' आदि १८ उत्कृष्ट निबध हैं। इसी प्रकार अन्य पुस्तकों मे भी प्रायः अच्छे साहित्यिक निबध हैं। अतिम पुस्तक मे अधिकाश लेख सपादक के ही हैं और कुछ पर्याप्त मात्रा मे सुन्दर हैं यथा कला,

रस, नम्रता इत्यादि।

श्री अम्बिका प्रसाद गुप्त की एक पुस्तक 'प्रबंध पूर्णिमा' बनारस से निकली है। इसमें भी भिन्न लेखकों के १५ निबंध हैं। पुस्तक बड़ी साधारण सी है। उसके कतिपय लेखो के नाम हैं 'अन्त्यज' 'हिम्मत करो' 'बच्चो की अकाल मृत्यु', 'जान केसिल का छापा खाना'।

कोर्स की पुस्तकें जो एंट्रेंस, एफ० ए०, या बी० ए० आदि परीक्षाओं के लिए लिखी एव सम्पादित की जाती है, वे भी प्रायः इसी वर्ग मे स्थान पाती हैं। इनमें से कुछ का नामोल्लेख प्रसगानुसार पिछले पृष्ठो मे भी हो चुका है यथा श्यामसुन्दर दास की गद्यरत्नावली'। कुछ और हैं यथा 'हिन्दी गद्यसग्रह', हरिशकर शर्मा 'कविरत्न' का 'हिन्दी गद्यविहार', वियोगी हरिकृत 'हिन्दी गद्यरत्नावली', श्री सद्गुरुशरण अवस्थी कृत 'गद्यप्रकाश' तथा पं० कृष्णानद पत कृत 'गद्यसग्रह' (जिसके मुख पृष्ठ पर लिखा है 'उच्च कोटि के निबधों का सग्रह आगर यूनिवर्सिटी द्वारा स्वीकृत') इत्यादि।

उपसंहार

निबंध साहित्य पर कार्य तथा अपरीक्षित सामग्री

इन पृष्ठों के साथ निबध-साहित्य की चर्चा तो समाप्त होती है। अब उपसहार रूप मे प्रथम तो निबध साहित्य पर तथा निबंध लेखकों पर जो कार्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रस्तुत हुआ है उसकी विवेचना आवश्यक है। दूसरे कुछ ऐसी भी सामग्री है जो भली भाँति मेरी परीक्षा के अतर्गत नहीं आ सकी है उसका भी कथन अप्रासगिक न होगा।

पहले क्षेत्र की सामग्रा बहुत सीमित है। क्योंकि सीधे निबध साहित्य पर दृष्टि बहुत कम लोगों की पड़ी है। एतत्सबधी कार्य केवल गद्य लेखकों के विवेचना के अतर्गत ही हमे प्राप्त होता है। पहली पुस्तक इस विषय की 'हिन्दी-गद्य-मीमासा' निकली थी। परन्तु उसका महत्व केवल पहली पुस्तक होने के कारण ही था। पुस्तक का अधिकाश हिन्दी के प्रमुख गद्य लेखको की रचनाओं के बड़े बड़े उदाहरणों से ही भरा था।

दूसरी पुस्तक निकली थी प० जगन्नाथप्रसाद शर्मा की 'हिन्दी की गद्य शैली का विकास'। यह पुस्तक पहली से कुछ अधिक सफल भी हुई और इसीलिए विख्यात भी बहुत हुई। इसी के आस पास एक तीसरी पुस्तक प० गणेशप्रसाद जी ने 'हिन्दी साहित्य का गद्यकाल' नाम से लिखी थी। इन दोनों में ही हिन्दी-गद्य पर सामूहिक दृष्टि से विचार किया गया है। यत्र तत्र हिन्दी निबध अथवा निबधकारों पर सकेत से अधिक, किसी की भी विशेषताओं का सूक्ष्म विश्लेषण और अध्ययन करते हुए कुछ भी नहीं लिखा गया था।

इसी प्रकार की एक चौथी पुस्तक है पं० सद्गुरुशरण अवस्थी की 'हिन्दी-गद्यगाथा'। इस पुस्तक के सबध में निवेदन तो है कि 'हिन्दी गद्यसाहित्य का आलोचनात्मक इतिहास और शैलीकारों की समीक्षा' परन्तु इसमें भी उपर्युक्त दोनों पुस्तकों से अधिक कोई विशेषता नहीं है। इसीलिए हिन्दी ससार ने इसका कोई विशेष सम्मान भी न किया।

पाँचवीं पुस्तक अभी एक मास पूर्व प्रकाशित हुई है। और यह है छतरपूर कालेज के हिन्दी अध्यापक प० ब्रह्मदत्त शर्मा की 'हिन्दी साहित्य में निबंध'। अपने विषय पर यह पहली ही पुस्तक है और उस क्षेत्र के अभाव की इसने बहुत कुछ पूर्ति भी की, परन्तु पुस्तक जितनी विस्तृत तथा व्यापक है, उतनी गभीर और विश्लेषणात्मक नहीं। कहीं कहीं पर किसी लेखक के उर्दू फारसी या सस्कृत तत्सम शब्दों की अथवा उसके द्वारा प्रयुक्त मुहावरों की इतनी लम्बी लम्बी सूचियाँ बनाई गई हैं कि शुष्कता एव नीरसता आ जाती है— उदाहरण के लिए दो चार दस-पाँच, शब्द या मुहावरे पर्याप्त होते।

अब उस अपरीक्षित सामग्री का दिग्दर्शन कराकर परिच्छेद की समाप्ति की जाती है। पहली पुस्तक है गगाप्रसाद अग्रवालकृत 'मनुष्य विचार'। दूसरी है, बदरी प्रसाद जोशीकृत 'विचार कुसुमांजलि'। यह काशीपुर से प्रकाशित हुई है। तीसरी पुस्तक है प्रतापमल नाहटा की 'मित्रता' और चौथी है महावीरप्रसाद द्विवेदी कृत 'सकलन'। इनके अतिरिक्त एक और पुस्तक है 'प्रबधार्कोदय'। इसके लेखक हैं कोई प० तुलसीराम। यह अतरौली (जि० अलीगढ़) से प्रकाशित हुई है।

इनके अतिरिक्त प्रस्तुत प्रयास के पिछले पृष्ठों में यदा कदा किसी किसी अपरीक्षित पुस्तक का नाम दिया गया है यथा शातिप्रिय द्विवेदी की 'युग और साहित्य', बियोगीहरि जी की तरगिणी आदि।

कुछ पुस्तकों का निर्देश और भी मिलता है परन्तु उनके लेखक का भी पता नहीं है यथा 'उच्छृङ्खल' 'फल सचय' आदि

परिशेष्ट

निबंध में प्रस्फुटित विशेष शैलियाँ

अब तक हिन्दी निबन्ध बहुत कुछ परिष्कृत, उन्नत एव परिवृद्ध हो गया है । उसकी अपनी विशेषताएँ हैं; उसमें विषयभेद तथा लेख-भेद से अनेक शैलियाँ भी प्रस्फुटित हो चुकी हैं अतः उनके वर्णन के विना इस विषय की पुस्तक नितात अपूर्ण समझी जायगी। परन्तु उक्त कार्य के लिये बड़ा गम्भीर तथा सूक्ष्म अध्ययन ही अपेक्षित नहीं है, प्रत्युत, इस विषय के साथ यदि पूर्ण न्याय किया जाय तो अपूर्व क्षमता और लेखन पटुता भी होना अनिवार्य है। वह कार्य अपरिपक्व लेखनी से प्रसूत नहीं हो सकता। अपने को मैं अभी इतना कुशल नहीं बना सका हूँ कि उक्तकार्य के भार के उत्तरदायित्व का पूर्ण निर्वाह कर सकूँ अतः नीचे की पंक्तियों मे यत्किंचित अंकित कर पुस्तक समाप्त की जाती है, उसी से पाठक सतोष करे ।

वास्तव मे तो शैलियों की कोई निश्चित संख्या नहीं है क्योंकि छोटे छोटे लेखकों की भी कभी कभी कुछ विशेषताएँ दृष्टिगोचर हुआ करती हैं, फिर भला अप्रतिभ एवं विद्वान् लेखकों का तो कहना ही क्या। अतः आदर्शरूप में तो जितने लेखक उतनीही शैलियाँ, इसी-लिये कोई कोई समालोचक विद्वान् भावात्मक, उपदेशात्मक, विव-रणात्मक, व्यंग्यात्मक, आख्यात्मक, व्याख्यात्मक, विवेचनात्मक, आलोचनात्मक, अनालोचनात्मक, गवेषणात्मक, तार्किक, ललित कथात्मक तथा न जाने कितने और-आत्मक जोड़ कर भेदोपभेद बताते ही चले जाते हैं, तथा कोई पाँच भेद करते हैं तो कोई सात, परन्तु मुख्यतया—विचारात्मक, भावनात्मक और वर्णनात्मक—यही

तीन शैलियाँ हैं । अधिक मे अधिक एक आलोचनात्मक और मानी जा सकती है ।

जगत् के वाह्य सौंदर्य एव प्रकृति के मनोरम दृश्यो तथा व्यापारो का वर्णन करना वर्णनात्मक निबन्धों का प्रधान लक्ष्य है । भावात्मक निबन्धों मे बुद्धि की अपेक्षा हृदय से अधिक सम्बन्ध होता है । इस प्रकार के निबन्ध कविता के समान भावोद्रेक कराके हृदय को प्रभावित करते हैं । इन्हीं भावात्मक निबन्धों से मिलते जुलते गद्यगीत भी हिन्दी साहित्य मे आज कल खूब प्रचलित हो रहे हैं । भेद केवल इतना है कि गद्यगीत मे केवल एकही भावना प्रधान रहती है, और निबन्धों मे यह अनिवार्य नहीं ।

इसके विपरीत विचारात्मक निबन्धों मे बुद्धि से काम लिया जाता है । एक विचार से दूसरा विचार निःस्यूत होकर विचारों की शृखला सी बनाता चलता है । इनमें कभी कभी लेखक के भावों की भी व्यंजना हो जाती है तथा इनकी भाषा अधिक शुद्ध और निखरी हुई सामने आती है ।

आलोचनात्मक निबधों की अधिकाश विशेषताएँ इसी पुस्तक के विगत पृष्ठों मे बतलाई जा चुकी हैं । आधुनिक लेखकों के प्रायः सभी निबध इसी श्रेणी में आयँगे ।

यहा पर इस विषय के विशेषज्ञ पं० रामचंद्र शुक्ल की कुछ सम्मतियाँ विस्तार से दी जा रही हैं जिससे प्रस्तुत विषय पर एक प्रामाणिक कथन ही नहीं अवतरित होगा, प्रत्युत पाठक लाभान्वित भी होंगे ।

"निबध या गद्यविधान कई प्रकार के हो सकते हैं—विचारात्मक, भावात्मक, वर्णनात्मक । प्रवीण लेखक इन विधानों का बड़ा सुन्दर मेल भी करते हैं । लक्ष्यभेद से कई प्रकार की शैलियों का व्यवहार भी देखा जाता है जैसे विचारात्मक निबंधों मे

व्यास[1] और समास[2] की रीति, भावात्मक निबधों मे धारा[3] तरग और विक्षेप[4] की रीति। इसी विक्षेप के भीतर वह प्रलाप शैली भी आयगी जिसका बॅगला की देखादेखी कुछ दिनों से हिन्दी मे भी चलन बढ़ रहा है। शैलियों के अनुसार गुणदोष भी भिन्न भिन्न प्रकार के हो सकते हैं।

धारा और तरग के योग वाली शैली का चतुर सेन शास्त्री का अतस्तल अच्छा उदाहरण है। वियोगीहरि का 'अतर्नाद' तथा 'भावना', रायकृष्णदास की 'साधना' और 'प्रवाल' तथा भॅवरमल सिंघी की 'वेदना' की चर्चा के उपरात शुक्लजी लिखते हैं, "यह तो हुई आध्यात्मिक या साप्रदायिक क्षेत्र मे गृहीत लाक्षणिक भावुकता जो बहुत कुछ अभिनीत या अनुकृत होती है अर्थात् बहुत कम दशाओं मे हृदय की स्वाभाविकपद्धति पर चलती है। कुछ भावात्मक प्रबन्ध लौकिक प्रेम को लेकर भी मासिक पत्रों में निकलते हैं जिनमे चित्र-विधान कम और कसक, टीस, वेदना, अधिक रहती है।"

"अतीत के नाना खण्डों मे जाकर रमने वाली भावुकता का मनुष्य की प्रकृति मे एक विशेष स्थान है। मनुष्य की इस प्रकृतिस्थ भावुकता का अनुभव हम आप भी करते हैं, और दूसरों को भी करते हुए पाते हैं। अतः यह मानव हृदय की एक सामान्य वृत्ति है। बड़े हर्ष की बात है कि अतीत के क्षेत्र मे रमाने वाली अत्यत मार्मिक और चित्रमयी भावना लेकर महाराज कुमार डा० श्री रघुवीर सिंह (सीता-मऊ, मालवा) हिन्दी-साहित्य क्षेत्र मे आए। उनकी भावना मुग़ल

– [1]व्यास शैली—थोड़ी सी बात अधिक षब्दों में कहना

[2]समास शैली—पूरी बात—थोड़े से नये तुले शब्दों मे कहना

[3]धारा शैली—इसमे हृदय के भावों का उदगार नदी की धारा या प्रवाह के समान होता है।

[4]विक्षेप शैली—किसी बात को रुक रुक कर प्रकट करना।

सम्राटों के कुछ अवशिष्ट चिह्न सामने पाकर प्रत्यभिज्ञा के रूप में मुगल साम्राज्यकाल के कभी मधुर भव्य और जगमगाते दृश्यों के बीच, कभी पतनकाल के विषाद, नैराश्य, और बेबसी की परिस्थितियों के बीच बड़ी तन्मयता के साथ रमी है। ताजमहल, दिल्ली का लाल किला, जहाँगीर और नूरजहाँ की कब्र, इत्यादि पर उनके भावात्मक प्रबधों की शैली बहुत ही मार्मिक और अनूठी है।"

"गद्य साहित्य में भावात्मक और काव्यात्मक गद्य का भी एक विशेष स्थान है, यह तो माननाही पड़ेगा। अतः उपयुक्त क्षेत्र मे उसका आविर्भाव और प्रसार अवश्य प्रसन्नता की बात है। पर दूसरे क्षेत्रों मे भी जहाँ गभीर विचार और व्यापक दृष्टि अपेक्षित है, उसे घसीटे जाते देख दुःख होता है। जो चिन्तन के गूढ विषय हैं, उन को भी लेकर कल्पना की क्रीड़ा दिखाना कभी उचित नहीं कहा जा सकता। विचार क्षेत्रों के ऊपर इस भावात्मक और कल्पनात्मक प्रणाली का धावा पहले पहल "काव्य का स्वरूप" बतलाने वाले निबंधों में बग साहित्य के भीतर हुआ।"

× × × ×

"काव्य पर न जाने कितने ऐसे निबध लिखे गए जिनमें सिवा इसके कि "कविता अमरावती से गिरती हुई अमृत की धारा है" "कविता हृदय कानन मे खिली हुई कुसुममाला है" "कविता देव लोक के संगीत की गूँज है", और कुछ भी न मिलेगा। यह कविता का ठीक ठीक स्वरूप बतलाना है कि उसकी विरुदा-वली बखानना? हमारे यहाँ के पुराने लोगों मे भी जहाँ न जाय रवि, वहाँ जाय कवि' ऐसी ऐसी बहुत सी विरुदावलियाँ प्रचलित थीं, पर वे लक्षण या स्वरूप पूछने पर नहीं कही जाती थीं। कविता भावमयी, रसमयी और चित्रमयी होती है इससे यह आवश्यक नहीं कि उसके स्वरूप का निरूपण भी भावमय, रसमय और चित्रमय हो। 'कविता' के ही

निरूपण तक भावात्मक प्रणाली का यह धावा रहता तो भी एक बात थी। कवियों की आलोचना तथा और और विषयों में भी इसका दखल हो रहा है, यह खटके की बात है। इससे हमारे साहित्य में घोर विचार शैथिल्य और बुद्धि का आलस्य फैलने की आशंका है। जिन विषयों के निरूपण में सूक्ष्म और सुव्यवस्थित विचार परंपरा अपेक्षित है उन्हें भी इस हवाई शैली पर हवा बताना कहाँ तक ठीक होगा।

अकारादि क्रम से पुस्तकस्थ लेखक सूची

अकारादि क्रम से पुस्तकों की सूची